।। ओ३म् ।।

पाक्षिक

परोपकारी

• वर्ष ५९ • अंक १६ • मूल्य ₹१५ महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र • अगस्त (द्वितीय) २०१७

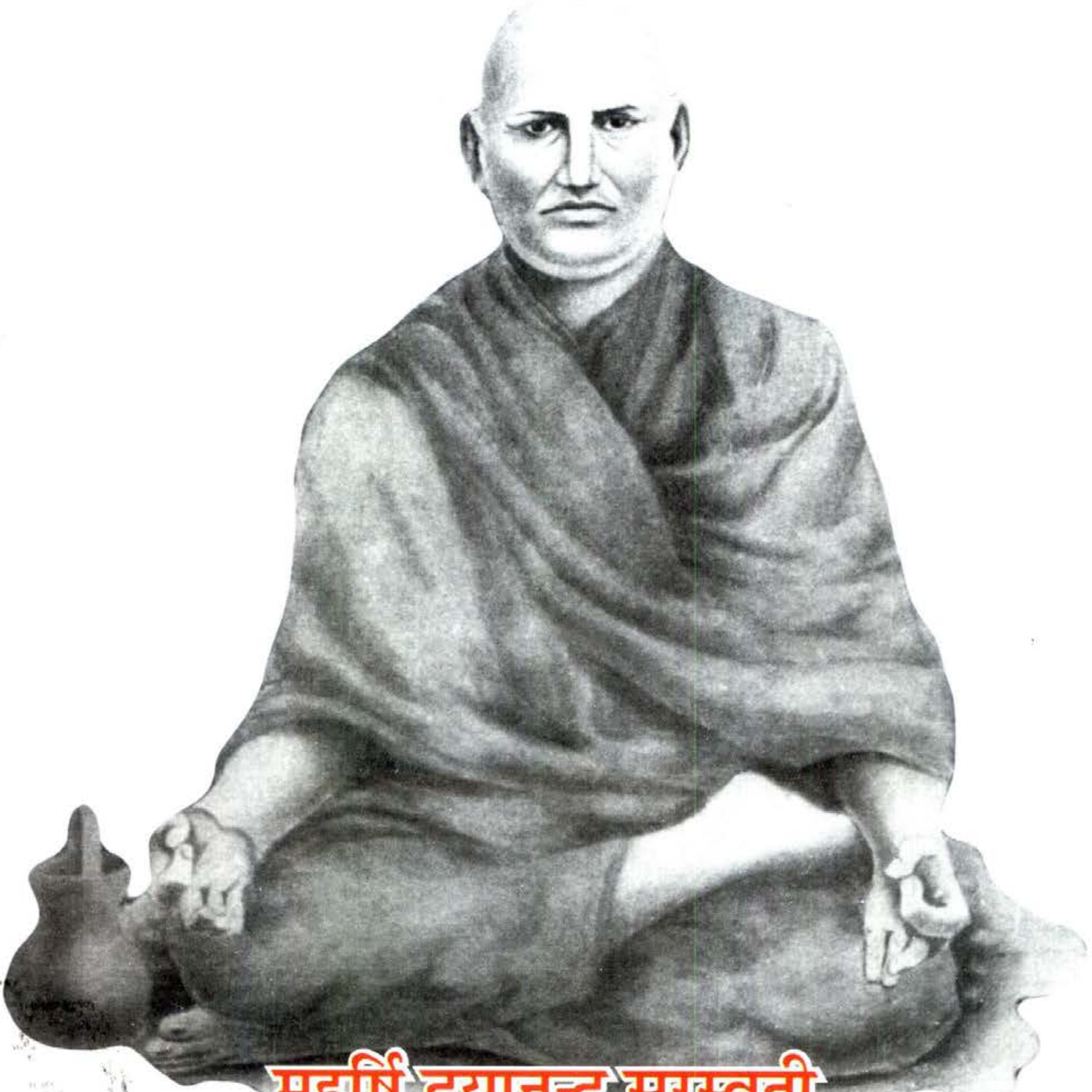

महर्षि दयानन्द सरस्वती

परोपकारिणी सभा के मंत्री श्री ओम्मुनि 'वानप्रस्थी' के नेतृत्व में
महामहिम श्री कल्याण सिंह जी (राज्यपाल-राजस्थान एवं कुलाधिपति-महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर) को ओ३म् चिह्न व महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का समस्त साहित्य भेंट करते हुए परोपकारिणी सभा का प्रतिनिधि मण्डल एवं साथ में श्री सज्जन सिंह कोठारी (लोकायुक्त-राजस्थान एवं पूर्व न्यायाधीश)

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ५९ अंक : १६

दयानन्दाब्द: १९३

विक्रम संवत्: भाद्रपद कृष्ण २०७४

कलि संवत्: ५११८

सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११८

सम्पादक

डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा,

केसरगंज, अजमेर- ३०५००१

दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर

वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।

दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

परोपकारी का शुल्क

भारत में

वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु., **त्रिवार्षिक**-५८० रु.,

आजीवन (१५ वर्ष)-२००० रु.।

एक प्रति - १५/- रु.

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर

द्विवार्षिक-९५ पा./१५२ डॉ.,

त्रिवार्षिक-१४० पा./२२५ डॉ.,

आजीवन (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.

एक प्रति - ३ पाउण्ड

एक प्रति - ४ डॉलर

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०

ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,
सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।
संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकाराः।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

अगस्त द्वितीय २०१७

अनुक्रम

०१. महर्षि दयानन्द और वैज्ञानिक....	सम्पादकीय	०४
०२. यज्ञ ही क्यों-४	डॉ. धर्मवीर	०६
०३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु	१२
०४. प्राचीन भारत में शिक्षा का स्वरूप	पं. उदयवीर शास्त्री	१६
०५. आर्यसमाज का वेद प्रचार...	रामनिवास 'गुणग्राहक'	२१
०६. वैदिक पुस्तकालय के नये संस्करण		२४
०७. पाठकों के विचार		२५
०८. वेद गोष्ठी-२०१७ के लिए निर्धारित विषय		२७
०९. श्री पं. इन्द्रजी विद्यावाचस्पति	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	२८
१०. पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय	सोमेश 'पाठक'	३०
११. आचार्य: उपनयमानो.....	सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार	३५
१२. शङ्का - समाधान - ७	डॉ. वेदपाल	३८
१३. संस्था-समाचार		४०
१४. आर्यजगत् के समाचार		४२

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

- उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं -
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

महर्षि दयानन्द और वैज्ञानिक परिदृष्टि

महर्षि दयानन्द जन सामान्य की दृष्टि में समाज-सुधारक मात्र थे, कुछ उन्हें संस्कृत का विशिष्ट विद्वान् भी मानते रहे हैं, परन्तु हम आर्यजन और महर्षि के सिद्धान्तों के मर्मज्ञ जानते हैं कि वे महर्षियों की उस परम्परा के संवाहक थे जो ज्ञान के परम-स्रोत परमात्मा का साक्षात्कार कर ज्ञान-विज्ञान के निर्मल भंडार को प्राप्त करते रहे हैं। लोक में प्रचलित विज्ञान (science) को महर्षि ने सदैव स्वीकार किया और उनके अनुयायियों-हम आर्यों ने भी। विश्व प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ. आत्माराम महर्षि को वैज्ञानिक ही मानते थे। विज्ञानवेत्ता स्वामी डॉ. सत्यप्रकाश, महर्षि की वैज्ञानिक परिदृष्टि के प्रशंसक थे। महर्षि की यह वैज्ञानिक परिदृष्टि उनके साहित्य में पदे-पदे परिलक्षित होती है। वैज्ञानिक नियमों को महर्षि '**सृष्टिक्रम के अनुकूल**' कहते हैं-''जो-जो सृष्टिक्रम के अनुकूल वह-वह सत्य और जो-जो सृष्टिक्रम के विरुद्ध है, वह सब असत्य है।'' महर्षि की इस दृष्टि के प्रशंसक उनके समकालीन भी थे। '**राजपूताना का अपूर्व इतिहास**' के यशस्वी लेखक, महाराणा सज्जनसिंह के विश्वासपात्र ऋषि-भक्त बारहठ कृष्णसिंह ने स्वामी जी के समकालीन वैष्णव पं. गट्टूलाल की स्मरण शक्ति की प्रशंसा करते हुए कहा कि वे शतावधानी थे, उन्हें साठ हजार श्लोक, मन्त्र याद थे, परन्तु स्वामी दयानन्द जी जैसी **विज्ञानबुद्धि** कुछ भी नहीं थी।

भारत के संविधान में शिक्षा प्रकरण के अन्तर्गत शिक्षा के उद्देश्यों में उल्लिखित 'वैज्ञानिक परिदृष्टि' का विशेष महत्त्व है। इसका अभिप्राय है कि वैज्ञानिक दृष्टि से तार्किक क्षमता को आत्मसात् करते हुए ज्ञान को सीखने की प्रक्रिया स्वीकार करनी चाहिए ताकि मानव में वैज्ञानिक सोच के आधार पर घटनाओं के अवलोकन करने की सामर्थ्य (क्षमता) का विकास किया जा सके। महर्षि दयानन्द से पूर्व राजा राममोहन राय ने मूर्तिपूजा के विरोध में तार्किक पद्धति को तो स्वीकार किया था, लेकिन उन्होंने पाश्चात्य शिक्षा और संस्कृति को स्वीकार करने का आह्वान किया और वे लॉर्ड मैकाले की अंग्रेजी शिक्षा-पद्धति के समर्थक बने। फलस्वरूप 19वीं शताब्दी में भारत में विशेष वैज्ञानिक परिदृष्टि का अधिक विकास नहीं हो सका। सर सैय्यद अहमद खान ने 'साइंटिफिक सोसायटी' का गठन किया, लेकिन वे भी वैज्ञानिक परिदृष्टि के मूल भाव के अनुसार मुस्लिम समाज में तार्किकता की वैज्ञानिक पृष्ठभूमि को प्रचारित करने में सक्षम नहीं हो पाए।

19वीं शताब्दी में एकमात्र महर्षि दयानन्द थे जिन्होंने वैज्ञानिक परिदृष्टि के महत्व को स्वीकार किया और समाज में प्रचलित अन्धविश्वासों, भूत-प्रेत, बलि-प्रथा, मूर्तिपूजा, भाग्यवाद इत्यादि का बुद्धि एवं विवेक के आधार पर तीव्र खण्डन किया। उन्होंने तर्क की दुधारी तलवार प्रयुक्त की, जिसमें एक ओर तर्कशीलता थी तो दूसरी ओर अन्तःप्रज्ञा (इन्ट्यूशन)। उन्होंने ही धर्म और विज्ञान को परस्पर विरोधी तत्त्व न मानकर सत्य की प्राप्ति के ही सोपान माना, जिसका आधार वैदिक चिन्तन था। युक्तिसंगत दृष्टिकोण उपलब्ध कराकर उन्होंने 1875 ई. में सत्यार्थ-प्रकाश की भूमिका में ही अपने मन्तव्य को स्पष्ट कर दिया था जिसके आधार पर भारतीय और विदेशी मतों के खण्डन की सात्विक प्रवृत्ति को वैज्ञानिक तार्किकता के धरातल पर स्वीकार किया गया।

अपनी वैज्ञानिक परिदृष्टि के कारण ही महर्षि अपने समान धर्म-सुधारकों और धर्मोपदेशकों के मध्य मध्याह्न के सूर्य की भाँति परम तेजस्विता के साथ दृष्टिगोचर होते हैं। योग के नाम पर ढोंग-पाखण्ड और अंधविश्वास का प्रचार-प्रसार करने वाले धार्मिक आचार्यों और गुरुओं में महर्षि की परिदृष्टि का शतांश भी प्रतीत नहीं होता। महर्षि तो 'विद्या' जैसे विशुद्ध दार्शनिक शब्द तक में वैज्ञानिक परिदृष्टि रखते हैं-''**पृथिवी से लेकर परमेश्वर-पर्यन्त (पदार्थों का) यथार्थ ज्ञान और उनसे यथायोग्य उपकार लेना**।'' क्या किसी धर्माचार्य ने **विद्या** शब्द पर इस वैज्ञानिक दृष्टि से विचार किया है? शायद नहीं। इसी कारण आर्य संन्यासी और विद्वान् कभी विज्ञान-विरोधी नहीं रहे। अन्य मत-मतान्तरों के प्रचारकों और आचार्यों की भाँति 'चमत्कारवाद' का प्रचार और समर्थन नहीं किया।

अभी हाल ही में इन्हीं अज्ञान, आडम्बर, अंधविश्वासों का खण्डन करने वाले वैज्ञानिक प्रो. यशपाल का निधन हुआ। प्रो. यशपाल जीवनपर्यन्त विज्ञान को जनसामान्य के लिए स्वीकार करने का प्रयास करते रहे। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष रहते हुए भी उन्होंने लोकप्रिय टी.वी. सीरियल **टर्निंग प्वाइंट** में सहज जिज्ञासा, जिसे उन्होंने बालोचित प्रश्नों की संज्ञा दी है, का समाधान करने का महत्वपूर्ण कार्य किया। उन्हीं के साथ प्रो. पुष्प भार्गव ने इसी विधा को स्वीकार किया जो **सैन्टर फॉर सेल्युलर**

एण्ड मॉलेक्युलर बायलॉजी, हैदराबाद से सम्बन्धित रहे। यद्यपि धार्मिक कर्मकाण्डों, जिनके कारण समाज में इन अन्धविश्वासों का जन्म हुआ, उन्होंने दैवीय या अलौकिक ऐसे किसी भी मतवाद का विज्ञान की कसौटी पर तीव्र खण्डन किया। स्वतन्त्रता के बाद शिक्षा के माध्यम से भी अन्धविश्वासी और असंगत व्यवहार का उतना तीव्र प्रत्याख्यान नहीं किया जा सका था जिसकी अपेक्षा स्वतन्त्रता के बाद तत्कालीन राष्ट्र निर्माताओं ने की थी।

आर्य समाज ने निर्भयता के साथ वैदिक तर्क-मीमांसा को स्वीकार कर वैज्ञानिक, तार्किक विश्लेषण के आधार पर जिस प्रकार का खण्डन-मण्डन आन्दोलन प्रारम्भ किया उससे महात्मा गांधी भी विचलित हो गए और उन्होंने आर्य समाज की खण्डन पद्धति की आलोचना करते हुए कहा था कि धर्म में तर्क का स्थान नहीं है। जबकि महर्षि दयानन्द ने तर्कशील विवेक के आधार पर ही सभी अन्धविश्वासों तथा भविष्यवाणियों की मान्यता का विरोध किया। यदि यह कहा जाए कि धार्मिक अन्धविश्वास के समक्ष हमारे तथाकथित बुद्धिजीवियों और वैज्ञानिकों ने घुटने टेक दिए हैं, तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

मैने अपने विश्वविद्यालयीय सेवा काल में इस कटु सत्य का साक्षात्कार अनेक बार किया कि विज्ञान के प्रोफेसर तक अन्धविश्वासी और भाग्यवादी ज्योतिषीय परम्परा के अनुयायी थे। विज्ञान के प्रोफेसर होने के बावजूद उनमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण का नितान्त अभाव था। क्योंकि वे इन धार्मिक अन्धविश्वासों को अलौकिक शक्ति का ही परिणाम मानते थे। फलत: उन्होंने न तो स्वयं वैज्ञानिक परिदृष्टि को स्वीकार किया और न ही अपने छात्रों में इस वैज्ञानिक मनोवृत्ति को उद्‌बुद्ध करने का कोई प्रयास ही किया। जब धर्म के ठेकेदार धर्म की व्याख्या करने में विज्ञान की बुद्धि-विवेकशीलता को अधार्मिक बताकर तार्किक विश्लेषण का खण्डन करते हैं तभी उनकी बातें उनके अनुयायी स्वीकार करते हैं। इतिहास साक्षी है कि गैलीलियो, कॉपरनिकस, ब्रूनो जैसे वैज्ञानिकों ने ऐसे ही अन्धविश्वासों और धार्मिक सम्प्रदाय के कट्टरवाद का सामना किया है। डॉ. बर्टेन्ड रसेल ने अपने संपूर्ण लेखन में ज्ञान की पद्धति को वैज्ञानिक परिदृष्टि के रूप में स्वीकार किया और यही महर्षि दयानन्द और आर्य समाज द्वारा अभीष्ट रहा है।

इसीलिए भारत के संविधान में वर्णित वैज्ञानिक परिदृष्टि का सच्चा प्रचारक और उसे आत्मसात् करने वाला महर्षि का अनुयायी आर्य समाज है, अन्य कोई नहीं, क्योंकि आर्य समाज वैदिक साहित्य में वर्णित सिद्धान्तों को सृष्टिक्रम के अनुकूल मानता है, जो लोकयात्रा के लिए आवश्यक भी है और प्रतिदिन के व्यवहार में भी जिनकी प्रामाणिकता असन्दिग्ध है।

- दिनेश

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में वर्ष २०१२ से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने,

जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091

email : psabhaa@gmail.com

यज्ञ ही क्यों-४

प्रवचनकर्त्ता - डॉ. धर्मवीर

लेखिका - सुयशा आर्य

पिछले अंक का शेष भाग....

यदि चुनना पड़ेगा तो आखिर में वेद ही तो हमारे पास सर्वोत्कृष्ट है। इसलिये स्वामी जी महाराज कहते हैं कि वेद मन्त्रों के माध्यम से जब हम यज्ञ करते हैं तो उससे यज्ञ के गुणों का बोध होता है, परमेश्वर की उपासना होती है और वेदों की रक्षा होती है। यदि हम परम्परा से वेद नहीं पढ़ेंगे, तो वह नष्ट हो जाएगा। इसलिए हमारे जो मुसलमान भाई हैं, बच्चों को स्कूल भेंजे या नहीं भेजें, कुरान जरूर याद कराते हैं। अभी सोमदेव जी हमारे, मुम्बई वाले, उन्होंने एक बात सुनाई। कहने लगे, हमारे यहाँ एक स्कूल है आर्य विद्या मन्दिर, वो बड़ा अच्छा स्कूल है मुम्बई में, प्रसिद्ध है। लोग लाख, दो लाख देकर भी उसमें दाखिला कराना चाहते हैं, ऐसा स्कूल है। एक बार एक बच्चे की माँ का दूरभाष आया कि मेरा बच्चा संस्कृत में कमजोर है, तो आप मेरे घर आकर दो-चार दिन उस बच्चे का मार्गदर्शन कीजिए। उन्होंने सोचा कोई माँ कह रही है संस्कृत के बारे में तो चले जाते हैं। घर गया तो पता लगा कि ये तो मुस्लिम परिवार है। उनको बड़ा आश्चर्य हुआ, उन्होंने बहिन जी से पूछा- बहिन जी! आप तो मुस्लिम हैं, फिर आप एक आर्यसमाजी स्कूल में क्यों पढ़ा रहे हैं? वहाँ इस बच्चे को संध्या सिखाते हैं, गायत्री मन्त्र सिखाते हैं, हवन में शामिल होता है। उसने बड़ी जोरदार बात कही, कहने लगी- तुम कुछ भी सिखाओ, तुम्हारा सिखाया हुआ स्कूल तक। पर मैं इनको रोटी तब देती हूँ जब मौलवी आकर कह देता है कि आज का पाठ इन्होंने सुना दिया है। चाहे इनका बाप सर पटककर मर जाए, इनको रोटी मिलेगी तब, जब ये कुरआन का पाठ सुना देंगे। कराते रहना तुम संध्या इनको। अर्थात् ज्ञान की रक्षा परम्परा के बिना नहीं हो सकती। इसलिए हमारे ऋषियों ने वेद मन्त्रों को यज्ञ और संध्या में जोड़ा है। मतलब मन्त्र के साथ परमेश्वर की उपासना हो रही है, परमेश्वर की स्तुति हो रही है, यज्ञ के गुणों का बोध हो रहा है और परम्परा की रक्षा भी हो रही है, एक यज्ञ कितने काम कर रहा है। क्या ये नहीं करने जैसा लगता है?

एक बात कह के अन्तिम चरण में चलते हैं। एक परिवार में मैं गया, वहाँ संयोग से कोई यज्ञ का प्रसंग था, महिलाओं की संख्या ज्यादा थी। मैंने पूछा माता जी, आप में से कितने लोग हवन करते हैं, पता लगा एक भी नहीं करता। हमने पूछा- आप में से कितने लोग हवन में शामिल हुए हैं? दो-चार ने कहा कि हम कभी-कभी शामिल हुए हैं। मैंने उनसे पूछा, एक बात बताइये आप, ऋषि कहते हैं कि हवन नहीं करने से पाप लगता है, आपको कभी महसूस हुआ कि कुछ कमी है, कुछ गलती है, कुछ पाप है? वो बोले- हमको तो कभी नहीं लगा। कमी लगे तो आदमी प्रयास करता है। सर्दी लगे तो कम्बल ढूँढता है, चादर ढूँढता है। गर्मी लगे तो छाता ढूँढता है, पैर जले तो जूता ढूँढता है। यदि कोई कमी ही महसूस न हो तो कोई चीज क्यों लेगा? स्वाभाविक रूप से हम हवन नहीं करते या नहीं करना चाहते, उसके पीछे एक ही कारण है कि हमको कमी महसूस नहीं होती कि इससे हमारा कोई नुकसान है या इससे हमको कोई हानि हो रही है। मैंने कहा या तो ऋषि गलत हैं या हम गलत हैं, दोनों में से एक तो गलत है। ऋषि कहता है- यह करना चाहिए और नहीं करने से नुकसान है। हम नहीं करते और हमें नुकसान का अनुभव भी नहीं होता। तो या तो ऋषि ने गलत कहा है या हम गलत हैं, दोनों में से कौन गलत हो सकता है? स्वाभाविक रूप से हम सब पढ़े-लिखे लोग यह कहेंगे कि हो सकता है हमारे समझने में कोई गलती हो। आजकल का पढ़ा-लिखा यदि ज्यादा समझदार होगा वो कहेगा कि ऋषियों ने गलत कहा है। मैंने कहा- कोई बात नहीं, हम दोनों ही बातें सही मानकर चलते हैं। देखते हैं कि बात कैसे बनती है। ऋषि जब कहता है कि कोई बात अनिवार्य है जीवन के लिए तो उसका जीवन में अभाव होने पर कोई कष्ट जरूर होना चाहिए। मैंने उनसे पूछा कि आपका यह घर है

और आपने अपने बेटे की शादी की, आप जो बहू लाए वो बड़ी अच्छी है, आप बहुत सुन्दर देखकर लाए और बहुत पढ़ी-लिखी देखकर लाए, लेकिन उसको एक बात में बहुत आलस्य आता है कि वो झाड़ू लगाना पसन्द ही नहीं करती। आपको कैसा लगेगा? जमेगा? चलेगा? नहीं लगाई झाड़ू तो नहीं लगाई। तो जो महिलाएँ बैठी थीं, बोलीं- ये पण्डित जी तो पागल हैं, ऐसा हो सकता है कि घर में झाड़ू न लगे और झाड़ू नहीं लगे तो कोई कूड़े के ढेर पर रहे तो आप उसे आदमी कहेंगे? नहीं कहेंगे ना। बात तो ठीक है। मैंने कहा- चलो झाड़ू तो आप उससे लगवा लेना। उसको कपड़े धोने में भी बहुत आलस्य आता है, कपड़े कोई धो दे तो ठीक है, नहीं तो बिना धोए चलते हैं और भी ज्यादा गुणी हो तो न नहाए, चलेगा? घर में कोई भी न नहाए, ऐसा घर हो तो आप कहोगे- इस घर में हम तो नहीं जायेंगे। आगे एक खूबी और हो कि वो बर्तन भी न माँजते हों। खुद ही तो खाना है, क्या बार-बार माँजना है। आपको लगता है कि ये सब बातें बेहूदा हैं, मूर्खतापूर्ण हैं। मैंने कहा कि यदि ये बातें गलत हैं, तो आप कचरे के ढेर पर रह रहे हैं, आपको यह मंजूर है? आप कहेंगे कि इतना भला तो घर है, ऐसी चमचमाती बिल्डिंग है, झाड़-पोंछ कर फर्श ऐसा बना रखा है कि आप फिसलते बनें, आपकी नजर भी फिसले और आप भी फिसल जाएँ और आप कहते हो कि हमारा घर कचरे का ढेर है। मैंने कहा- हाँ कहता हूँ। जब आप झाड़ू बिना लगाए घर में नहीं रह सकते, आप बिना बर्तन माँजे भोजन नहीं कर सकते, बिना कपड़ा धोए आप पहन नहीं सकते, बिना स्नान किए आप रह नहीं सकते, इसका मतलब शुद्धता और पवित्रता हमारी अनिवार्य शर्त है जीने की। तो आप ये बताओ कि आपने फर्श धोया है, आपने दीवार साफ की है, आपने मकान में रंग-रोगन किया है, आपने झाड़-पोंछ की है, सब बहुत अच्छा किया है, लेकिन इसकी वायु को आपने कैसे शुद्ध किया है? कौन-सी झाड़ू से? बाकी चीजें तो थोड़ी-थोड़ी देर काम आती हैं। भोजन का पात्र थोड़ी देर के लिए काम आता है, वस्त्र बदलते रहते हैं, स्नान २४ घण्टे में एक बार करते हैं, झाड़ू-पोंछा तो घर में रहते हैं, थोड़ा सा अच्छा लगता है, लेकिन श्वास-प्रश्वास आप प्रत्येक क्षण लेते हैं तो आप ये बताओ कि आप की सांस कचरे के ढेर में से आ रही है या नहीं? आपने इसकी शुद्धि के लिए कौन सा प्रयत्न किया था? कौन सी झाड़ू लगाई थी? कौन सा पोंछा लगाया था? कौन सी शुद्धता का काम किया था, यदि आपने हवन नहीं किया?

हमने हर तरह की शुद्धता अपने जीवन में अपनाने की कोशिश की, हमने स्थान पवित्र किया, हमने वस्त्र शुद्ध किया, हमने पात्र शुद्ध किया, हमने शरीर शुद्ध किया। आन्तरिक शुद्धता की बात तो जाने दीजिये, मन और आत्मा की पवित्रता की बात तो जाने दीजिए, लेकिन श्वास-प्रश्वास जो हमारे जीवन की अनिवार्य शर्त है, अनिवार्य अंग है, उसकी शुद्धता और पवित्रता के लिए कभी हमने सोचा? अब आप बताइये, ऋषि ठीक है या हम ठीक हैं? कोई सोचने जैसी बात ही नहीं।

उपनिषद् में बड़ा सुन्दर प्रसंग आता है- वो कहता है यज्ञ केवल बाह्य नहीं है, यज्ञ अन्दर है। आप मन्त्र पढ़ते हो **उद्बुध्यस्वाग्ने....** इस मन्त्र के अर्थ पर भी आपने कभी विचार किया है? इसमें दो बड़ी विचित्र सी बातें कहीं हैं- अग्ने उद्बुध्यस्व- हे अग्ने! तू उद्बुध हो जा! अग्नि को चेताओ, अग्नि को जगाओ। यजमान कह रहा है, हे अग्नि! तुम उद्बुध हो जाओ, जाग जाओ और क्यों जाग जाओ? 'प्रतिजागृही' ताकि तू मुझे जगावे। क्या हम सोए हुए हैं? क्या सोता हुआ आदमी आग जलाता है? लेकिन मन्त्र कह रहा है और अग्नि को सम्बोधन करके कह रहा है कि हे अग्नि! त्वं उद्बुध्यस्व और प्रतिजागृहि- मुझे जगा।

इसका मतलब कि मैं निश्चित रूप से सोया हुआ हूँ। मेरे सोने की पहचान क्या है? मैं सोता हूँ तो निष्क्रिय हो जाता हूँ। जो आदमी सोता है, वह बोलता नहीं है, चलता नहीं है, देखता नहीं है, करता नहीं है, तो हम क्या कहते हैं? क्यूँ भाई, सो रहे हो क्या? सोना हमारी क्रियाओं का निष्क्रियता में बदल जाना है। हम जाग रहे हैं, लेकिन लगता है कि हमारी जो सक्रियता जो सजगता चाहिए, वो प्राप्त नहीं है। इसलिए मन्त्र का अगला हिस्सा कहता है कि आदमी कौन जागा हुआ है? जो '**इष्टापूर्ते संसृजेथा....**' वो व्यक्ति, वो मनुष्य, वो पुरुष, वो महिला, वो स्त्री जागी हुई है, जिसने अपने जीवन में दो काम किए हैं- इष्ट और

आपूर्त। इसके कई अर्थ हैं, स्वामी जी महाराज तो इष्ट का अर्थ आत्मोन्नति से प्रारम्भ करते हैं और आपूर्त का अर्थ होता है कि आपने धर्मशाला बनवा दी, आपने स्कूल में कमरा बनवा दिया, आपने प्याऊ लगवा दी, आपने पेड़ लगा दिया, आपने तालाब खुदवा दिया, जो अपने पुराने समय में गाँवों वगैरह में जो परम्परा हुआ करती थी, ये आपूर्त कहलाते हैं। मतलब जो सबके लिए उपयोगी होते हैं, सबके काम की चीजें होती हैं, वो सब आपूर्त कहलाती है और जो व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित है, वो इष्ट कहलाती है। यज्ञ को इष्ट कहते हैं और परोपकार के काम को, धर्म के काम को आपूर्त कहते हैं। वो आदमी जागा हुआ है, वो आदमी चेतन है, वो आदमी सजग है, इष्ट और आपूर्त में जिसने अपने को जगाया हुआ है अर्थात् जो जितना अपना ख्याल रखता है, उतना ही वो समाज का भी रखता है। उसी समाज में विद्रोह नहीं होगा, उसी समाज में अशान्ति नहीं होगी, उसी समाज में गुंडागर्दी नहीं होगी, जहाँ व्यक्ति अपना भी ध्यान रखता है और अपने साथ अपने परिवेश का भी ध्यान रखता है। इसलिए हम जब यज्ञ करते हैं, तो इतने बड़े संकल्प के साथ अग्नि को स्थापित करते हैं। '**इष्टापूर्ते सं सृजेथामयञ्च**'- उपनिषद्कार कहता है, यज्ञ तो करना ही चाहिए, उस समय भी कुछ भले आदमी रहे होंगे, वो बोले- महाराज क्या करें, हमारे पास तो समिधा, घी, सामग्री नहीं है, तो हवन कैसे करें? हम सफर में हैं तो? तुम ऐसा करो कि यदि चीज कम हो तो कम से कर लो। बोले हमारे पास तो कुछ भी नहीं है। तो ऐसा करो कि तुम पानी की आहुति पानी में दो, लेकिन हवन करो। वे बोले, हम तो रेगिस्तान में रहते हैं, वहाँ तो पानी भी नहीं है। तो बोले- रेत है ना? मिट्टी है ना? मिट्टी को ही कुण्ड बनाओ, मिट्टी को ही समिधा बनाओ, मिट्टी को ही घी बनाओ, मिट्टी की आहुति मिट्टी में ही दो, लेकिन यज्ञ मत छोड़ो। वो कहते हैं, महाराज हम हवाई जहाज में जा रहे हैं, हमको तो मिट्टी भी नहीं मिलती। बोले- कोई बात नहीं, तब भी हवन करो। मन में ही मन्त्र बोलो, मन को ही कुण्ड बनाओ, मन को ही घृत बनाओ, मन से मन में आहुति दे दो। लेकिन मूल बिन्दु क्या है- यज्ञ मत छोड़ो।

यज्ञ का इतना महत्त्व हमारे शास्त्रकार कहते हैं और इसके लिए एक बहुत ही सुन्दर श्लोक (मैं पन्ने पलट रहा था तो दोबारा मुझे याद आ गया) उपनिषद् में है वहाँ छः आहुतियों की चर्चा है- **प्राणाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा.....।** और एक-एक की आहुति को वो बताता जाता है कि एक आहुति देने से हमारा क्या लाभ होता है। ठीक है, उसने हर आहुति के लाभ बताए कि ये इस लक्ष्य को प्राप्त कराने का कारण है, ये इस लक्ष्य को प्राप्त कराने का। लेकिन आगे एक सुन्दर सा श्लोक है, वो आपके याद करने लायक है। आपने कभी घर में उन बच्चों को देखा है, जो बहुत छोटे-छोटे हैं। पुराने समय में तो ऐसा होता था कि चूल्हा होता था और सवेरे उठकर माँ चूल्हे पर बैठी है और बच्चे माँ को घेर के चूल्हे के पास बैठते थे। शहर में तो वो परिवेश हम नहीं देख पाते, लेकिन छोटे बच्चे जो भी हैं, प्रातःकाल उठते ही उनको भूख सताती है और वो माँ को घेर कर खड़े होते हैं, माँ को घेर कर बैठते हैं, तो यूँ समझो यज्ञ भी एक माँ है, और जैसे माँ को भूखे बच्चे घेर कर बैठते हैं, वैसे ही सारे देवता यज्ञ को घेर कर बैठते हैं। किसी बात को समझाने के लिए शास्त्र इतनी अच्छी उपमा का उपयोग करता है। पंक्ति है- '**यथेह क्षुधिता बालाः ....उपासते**' जैसे भूखे बच्चे माँ की उपासना करते हैं, उपासना शब्द भी यूँ समझ में नहीं आता, उपासना मतलब, मजबूरी कब होती है, मजबूरी में जब हम किसी चीज को चाहते हैं, तो वो उपासना है, क्या भगवान् के साथ कभी इतनी मजबूरी लगती है कि वो उपासना बन जाए?

यज्ञ इतना आवश्यक है, जितना बच्चे के लिए माँ। उपासना वह चीज है, जिसके करे बिना रहा न जाए। जिसके बिछुड़ने से व्याकुलता पैदा हो, मिलने की उत्कंठा हो, वो जो परिस्थिति है, वो है हमारी उपासना। जैसे बच्चे माँ को घेर कर भूख को मिटाने का यत्न करते हैं। यहाँ 'यज्ञ' शब्द नहीं लिखा है, यज्ञ के कई अर्थ होते हैं, परन्तु वहाँ 'अग्निहोत्र' लिखा है- **अग्निहोत्रम् उपासते।** कौन उपासना करते हैं? जड़ और चेतन दोनों। अर्थात् ये जितने भूत हैं- जड़ या चेतन, ये भूखे हैं और भूखा विकृत होता है, बीमार होता है, कमजोर होता है और उसकी भूख यदि

मिटानी है, उसकी दुर्बलता दूर करनी है, तो उसे भोजन देना पड़ेगा। वातावरण का भोजन अग्निहोत्र है। वातावरण में जिस चीज की कमी हुई है, उसी को तो पूरा करोगे। अग्निहोत्र के द्वारा वातावरण में उत्पन्न उन दुर्बलताओं को, उन कमियों को, अभावों को दूर किया जाता है, जो वातावरण में पैदा हो गए हैं। इसलिए देवताओं का मुख यज्ञ के द्वारा भरा जाता है। '**अग्निर्वै देवानाम् मुखम्**'।

आप मन्दिर में जाकर मूर्ति को खिलाते हो और समझते हो मूर्ति ने खा लिया, भले ही उसने होंठ भी न हिलाये हों। देवताओं को सन्तुष्ट करना चाहते हो तो आहुति अग्नि में पड़ेगी तो जड़-चेतन दोनों देवता लाभान्वित होंगे। इसलिए हमारे ऋषियों ने एक विधा निकाली जो जीने की एक कला है। हमारे ऋषि लोग छोटे से छोटे, सामान्य से सामान्य काम के द्वारा बड़े से बड़ा मतलब सिद्ध करते हैं। हमारे यज्ञ को उन्होंने उपासना में बदल दिया। मन्त्र पढ़ा, दिव्य औषधियों की आहुति दी, भगवान् की स्तुति की, देव-पूजा की, तो हमारा सामान्य सा काम अद्‌भुत देव की उपासना का प्रकार बन गया, यही उनकी महानता है, यही उनका ऋषित्व है। किसी काम को अच्छा करने का नाम यज्ञ है। यज्ञ हमारे ऋषियों ने हमारे काम की कसौटी बताई कि काम कैसा करना? ऐसा करना जिससे वो काम यज्ञ में बदल जाए। कोई काम यज्ञ में कब बदलता है? कोई भी काम जब परोपकार के लिए होता है, तो वह यज्ञ बन जाता है और हमारा यह छोटा सा यज्ञ परोपकार के लिए ही किया जाता है। हमारे यज्ञ से यदि परोपकार की सिद्धि होती है तो यह यज्ञ है और न हो तो यज्ञ नहीं है। जिस तरीके से भगवान् काम करता है, वो तरीका यज्ञ है, उस तरीके से हम करेंगे तो वही काम हमारा भी यज्ञ हो जाएगा, क्योंकि भगवान् का तरीका और हमारा तरीका एक है। इसी बात के साथ अपनी बात को विराम देता हूँ।

पृष्ठ संख्या ४१ का शेष भाग..... (संस्था-समाचार)

जलवायु शुष्क होने से यहाँ हरियाली अपेक्षाकृत कम ही रहती है, परन्तु वर्षा ऋतु इस शुष्कता को सौन्दर्य प्रदान कर देती है। ऋषि उद्यान के निकट अरावली पर्वतमाला भी इस प्राकृतिक सौन्दर्य से भर जाती है। पहाड़ों पर घाटियों में दूर तक हरी झाड़ियाँ, पेड़, घास नजर आती है। इस मौसम में गुरुकुल के विद्यार्थी ईश्वर प्रदत्त इस प्राकृतिक सौन्दर्य का आनन्द लेने के लिये पवर्तारोहण करते हैं। इस बार भी २३ जुलाई रविवार को यह आयोजन रखा गया। अरावली पर्वत के एक ओर अजमेर है और दूसरी ओर पुष्कर। विद्यार्थी अजमेर की ओर से पर्वत पर चढ़े और प्रकृति की गोद में बैठकर भोजन का आनन्द लिया और पुष्कर की ओर से नीचे उतर गये। पुष्कर में आर्यसमाज जाकर उसका अवलोकन किया। इस प्रकार पूर्ण उत्साह के साथ यह भ्रमण सम्पन्न हुआ। इस भ्रमण में विद्यार्थियों का नेतृत्व आचार्य कर्मवीर, आचार्य ज्ञानचन्द्र एवं आचार्य वेदनिष्ठ ने किया।

शंका-समाधान, प्रवचन-प्रात:कालीन प्रवचन में स्वामी मुक्तानन्द जी द्वारा पूछे गये प्रश्नों का उत्तर देते हुए **आचार्य सत्यजित् आर्य** ने शङ्का समाधान किया। इसके अतिरिक्त स्वामी मुक्तानन्द व आचार्य सोमदेव ने भी अपने-अपने विचार ऋषि उद्यान की यज्ञवेदी से व्याख्यायित किये। इन्हीं दिनों अपने प्रवास के दौरान स्वामी आशुतोष परिव्राजक भी आश्रम में उपस्थित रहे। आश्रमवासियों को उनके विचारों को सुनने का अवसर मिला। **स्वामी आशुतोष** ने कहा कि जैसे सूर्य संसार से अन्धकार को दूर करता है, वैसे ही विद्वान् का कर्तव्य है अविद्या, अन्धकार को दूर करना। ईश्वर ने मनुष्यों के कल्याण के लिये यह संसार बनाया, वेद ज्ञान दिया। जिन्होंने वेद के ज्ञान-विज्ञान को जीवन में धारण किया वे ऋषि कहलाये। वेद और वेद-अनुकूल ऋषियों द्वारा बनाये गये सभी उपनिषद्, दर्शन शास्त्रों का प्रतिपाद्य विषय ईश्वर ही है।

सोमवार से शुक्रवार तक सायंकालीन प्रवचन में महर्षि दयानन्द कृत '**ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका**' का पाठ एवं चर्चा होती है। **उपाचार्य सत्येन्द्र जी** ने कहा कि ऋषियों ने वेदों का अनुसरण करते हुए मुक्ति को प्राप्त किया। संसार के सभी मनुष्य दु:खों से छूटना चाहते हैं लेकिन उसके अनुकूल कर्म नहीं करते हैं। जो मुक्ति के लिए प्राणपन से कर्म करते हैं वे मुक्त हो जाते हैं। शनिवार सायंकालीन प्रवचन के क्रम में वानप्रस्थी **श्री मुमुक्षु मुनि** ने आर्यसमाज के तीसरे नियम की चर्चा की। रविवारीय प्रात:कालीन सत्र में **श्री विजयसिंह गहलोत** एवं **ब्र. अग्निवेश** ने भी अपने विचार प्रकट किये।

(परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

योग—साधना शिविर

दिनांक : ८ से १५ अक्टूबर २०१७

आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान-विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है। फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति प्राप्त नहीं हो पा रही है। इसका कारण है कि साधना के विषय **साध्य, साधन, साधक व अन्य साधकों-बाधकों** के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। इस योग-साधना शिविर में इन्हीं विषयों का वैदिक-दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।
२. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।
३. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य-सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।
४. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।
५. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि-उद्यान परिसर में ही की जायेगी।
६. बाह्य-वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे- समाचार-पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखने आदि पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।
७. किसी प्रकार का शारीरिक रोग यथा- खाँसी, जुकाम अथवा अन्य कोई ध्वनि उत्पादक रोग वाले को प्रवेश नहीं दिया जायेगा।
८. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।
९. किसी भी मादक द्रव्य, चाय-कॉफी आदि का सेवन निषिद्ध होगा।
१०. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन-सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।
११. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ-मन्त्री परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) से संपर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता-बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्-पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क १००० से २००० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है।

ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं, शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने-ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। यदि अपने कार्य स्वयं न कर सकते हों तो सहायक साथ में लायें। अजमेर या निकटवर्ती स्थल (पुष्कर) देखना चाहें, तो शिविर से पूर्व या पश्चात् अतिरिक्त समय निकाल कर आयें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४

: मार्ग :

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेलवे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

email:psabhaa@gmail.com **-संयोजक**

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को स्थान दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हों। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें। **-संपादक**

कुछ तड़प–कुछ झड़प

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

कण-कण में ईश्वर की व्यापकता–श्रीमान् साधक जी ने ऋषि उद्यान में बहुत प्रेम से इस सेवक से पूछा–क्या आपने कण-कण में ईश्वर की व्यापकता पर कभी कुछ लिखा है? आपका इस सम्बन्ध में क्या अनुभव है? उनका प्रश्न अच्छा है, उपयोगी है, सरल है और गम्भीर भी। मेरा निवेदन है कि मैं न सिद्ध हूँ और न साधक हूँ। ईश्वर का एक उपासक हूँ। एक उपासक के नाते कुछ अनुभव भी हैं, परन्तु अपने अनुभवों का बखान नहीं कर सकता। उपासना ईश्वर पर उपकार लादने व जतलाने के लिये नहीं। यह तो आत्म-शुद्धि व ऊर्जा-प्राप्ति के लिये है।

मेरे व्याख्यानों का एक मुख्य विषय ईश्वर की सर्वव्यापकता रहता है। साधक जी को बताया कि विश्व में केवल ऋषि दयानन्द ईश्वर को सर्वव्यापक मानते हैं और कोई नहीं मानता है। Omnipresent सर्वव्यापक शब्द तो विश्वव्यापी है। ईश्वर तो ऊपर वाला, Heavenly Father, आसमानी बाप माना जाना जाता है। कुरान में अल्लाह के ९९ नाम हैं, परन्तु उसका काम दूरस्थ होने से फरिश्तों से ही चलता है। ऋषि ने ईश्वर के असंख्य नाम बताये हैं। मैं प्राय: कहा करता हूँ वह हर जन में है, हर मन में है, हर तन में है और वह हर दिशा में है। परमात्मा प्राणियों में ओतप्रोत है। यह वेद कहता है। वह प्रभु सर्वव्यापक न होता तो सर्वज्ञ भी न होता, स्रष्टा भी न होता और वह सर्वशक्तिमान् भी न होता।

ईश्वर की सर्वव्यापकता पर अटल विश्वास के कारण मैंने एक गीत में लिखा है–

वह ईश मेरे पास है। मेरा अटल विश्वास है।।

फिर लिखा–

मेरे अंग संग भगवान् है, क्यों मौत की चिन्ता करूँ।
पूजन करें उस ईश का, कण-कण में जिसका वास है।
है जगनियन्ता एक वह, रहता जो सबके पास है।।

मत-पन्थ जिसको खुदा कहते हैं वह वास्तव में जुदा है, दूर है, ऊपर है, वह पास नहीं है। हमारा आदर्श प्यारा ऋषि है जिससे अन्त समय में पूछा गया, आप कहाँ हैं? ऋषि का उत्तर बेजोड़ है, 'ईश्वरेच्छा में'। इसीलिये ऋषि जड़ स्थल को तीर्थ नहीं मानते। टंकारा, अजमेर, उदयपुर हमारे तीर्थ नहीं। गंगा, नर्मदा, कृष्णा, यमुना, कावेरी हमारे लिये वन्दनीय नहीं। संगीनों से सीना अड़ाकर स्वामी श्रद्धानन्द जी ने, सिर पर कुल्हाड़े का वार हँसते-हँसते सहकर मुनि स्वतन्त्रानन्द ने ईश्वर की सर्वव्यापकता में अपना विश्वास दिखाया। मेरे जीवन का यही अनुभव है कि प्रभु को सर्वव्यापक जानकर प्रणव जप का आनन्द प्राप्त होता है।

उनको क्या कहा जाये?– महाराष्ट्र से एक कृपालु ने न जाने कितने पत्रों में एक लम्बा पत्र छपने भेजा है। हमें भी भेजा है। लातूर समाचार ने हमारा नाम हटाकर उसे संक्षेप करके छापा है। जब हम इसे किसी पुस्तक में पूरा छापेंगे तो आर्य जनता इस प्रेम-पत्र को पढ़कर दंग रह जायेगी। जिनके पिताजी का मैं प्रशंसक रहा। श्रीमान् का, उनकी पत्नी का और पुत्र तक का प्रशंसक था और हूँ। उनको उनकी स्वच्छन्द शैली पर दोष क्या देना? वे शीघ्र पछतायेंगे। वह पत्र सम्पादक परोपकारी को भी भेजा गया है।

किस बात के लिये लताड़ा, कोसा जा रहा है। जो अपराध हमने किया ही नहीं वह दोष हम पर थोपा जा रहा है। डंके की चोट से प्रचारित हो रहा है कि रक्तसाक्षी पं. लेखराम ग्रन्थ के पृष्ठ १३० पर हमने लिखा है कि स्वामी ओमानन्द जी के पिता पं. लेखराम जी की कृपा से मुसलमान होते-होते बचे। मेरे ग्रन्थ का पृष्ठ १३० बहुतों ने देख लिया है। उस पृष्ठ की तो बात ही क्या सारे ग्रन्थ में किसी भी पृष्ठ पर ऐसा कुछ भी नहीं लिखा गया। भड़ास निकालने वाले, सुन सुनाकर इतिहास गढ़ने वाले को मेरी किसी भी पुस्तक में से ऐसा वाक्य मिले तो उसका फोटो छपवा दें। हम नाक रगड़ कर क्षमा मांगेंगे। ऐसा कहने वाले, लिखने वाले, विषैला प्रचार करने वाले अपने लिये आप दण्ड निश्चित करें। हम इन्हें कुछ नहीं कह सकते–

है रीत आशिकों की तन-मन निसार करना।
रोना सितम उठाना और उनसे प्यार करना।।

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने जान डाल दी–यह सन्

१८९९ की घटना है तब स्वामी श्रद्धानन्द जी महात्मा मुंशीराम के नाम नामी से जाने जाते थे। पटियाला के आर्यों की पहली अग्नि-परीक्षा हुई। आर्यों को अमानवीय यातनायें दी गईं। आर्यों का प्रचण्ड बहिष्कार किया गया। आर्य समाज में किसी भी ग्रन्थ में किसी लेखक ने इस अग्नि-परीक्षा का उल्लेख नहीं किया। यह पटियाला के राजद्रोह के अभियोग से बहुत पहले की घटना है। हमारा भी दोष है कि हम एक शताब्दी से भी ऊपर समय तक विस्मृति की परतों से इस स्वर्णिम इतिहास की खोज न कर पाये। स्वामी श्रद्धानन्द संन्यास-दीक्षा शताब्दी वर्ष में 'सद्धर्म प्रचारक' की फाइलों से हमें इसका वृत्तान्त मिला है। जो आर्यों को दबाना और मिटाना चाहते थे, स्वामी श्रद्धानन्द जी की हुंकार सुनकर उनकी बोलती बन्द हो गई। महात्मा मुंशीराम जी के साहसिक नेतृत्व ने आर्यों में नवजीवन का संचार कर दिया। शीश तली पर धरकर आर्यवीर हर विपदा को सहने के लिये आगे बढ़े।

महात्मा जी ने कहा, आप आर्य बिरादरी बनाकर जन्माभिमानी इन पोंगापंथियों का बहिष्कार करो। जड़ पदार्थों की पूजा करने वाले आपके जोश व उत्साह के सामने टिक न पायेंगे। आप कष्ट सहन करेंगे तो संसार आपकी शूरता पर वाह! वाह!! करेगा। इतिहासकार आपकी शौर्य गाथा पर अपनी लेखनी उठायेंगे। बहिष्कार का मिसाइल तो न जाने कहाँ-कहाँ आर्यों पर छोड़ा गया। आर्य समाज के आरम्भिक काल में सम्भवत: इतना बड़ा भयंकर बहिष्कार इससे पहले कहीं भी आर्यों का नहीं हुआ था। कहारों तक ने आर्यों का बहिष्कार कर दिया। आर्य समाज मन्दिर में पैर धरने वाले हर व्यक्ति के बहिष्कार की घोषणा की गई। आर्यसमाज की शान को चार चाँद लग गये। एक भी आर्य तब डगमगाया नहीं।

'जुल्म की आंधी इस ज्वाला को अरे और भड़काती है।'

क्या समझे?- स्वामी विवेकानन्द जी की विदेशी चेली बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में लखनऊ पहुँची। वहाँ उसने अंग्रेजी में एक भाषण दिया। अंग्रेजी पठित उच्च शिक्षित हिन्दू उसे सुनकर गद्‌गद हो गये। उसने कहा क्या? उसके व्याख्यान का निचोड़ था कि हिन्दू धर्म इस्लाम के बिना अधूरा है और इस्लाम हिन्दू धर्म के बिना अधूरा है। उसका यह निर्णय एक cheap opinion (सस्ता मत) से बढ़कर कुछ भी नहीं। मुसलमानों ने इस बात पर तो प्रसन्नता प्रकट की कि हिन्दू धर्म इस्लाम के बिना अधूरा है, परन्तु इस्लाम हिन्दू धर्म के बिना अधूरा है, इसे मुसलमानों ने कूड़ेदान में डाल दिया। देश भर में एक महात्मा मुंशीराम ने इस गोलमटोल फ़तवे की धज्जियाँ उड़ाईं।

विधवा समस्या- योगी आदित्यनाथ जी ने बिहार में श्रीयुत् नीतीश कुमार से पूछा कि वह तीन तलाक पर चुप क्यों हैं। योगी जी को मुस्लिम महिलाओं की तो चिन्ता है। यह अच्छी बात है, परन्तु आज भी गाँव-गाँव में हिन्दू समाज में हिन्दू विधवाओं की और पति-त्यक्ता युवा देवियों की संख्या बहुत चिन्ताजनक है। उस पर योगी कभी भी नहीं बोले। स्वामी विवेकानन्द जी के निधन के समय बंगाल में एक-एक वर्ष की हिन्दू विधवाओं की संख्या चौंकाने वाली थी। जन्म से पहले ही हिन्दू लड़के-लड़कियों के विवाह का सिट्टा लग जाता था। दो-दो साल के शिशु पति अपनी एक-एक वर्ष की विधवा पत्नी छोड़कर मर जाते थे। इस महारोग पर विवेकानन्द जी ने कभी कुछ कहा व लिखा ही नहीं। उनके इस मौन व्रत पर बलिहारी। महात्मा मुंशीराम जी ने इस पर रक्तरोदन किया। विधवा-विवाह के आन्दोलन को आगे बढ़ाने वाले स्वामी श्रद्धानन्द का ऋण चुकाने के लिये हिन्दुओं ने कभी कुछ किया ही नहीं। रोग को रोग ही न मानना मौत को निमन्त्रण देना है।

आज भी ये रोग हैं- नर्मदा के शुद्धिकरण के नाम पर म.प्र. में नर्मदा की आरती की लहर चल रही है। गंगा का शुद्धिकरण हो न हो, गंगा की भी उ.प्र. में आरती उतारी जाती है। ईश्वर बिचारे को तो त्यागपत्र दिया जा चुका है। शङ्कराचार्य की गद्दी पर ब्राह्मण कुल में जन्मा हिन्दू ही क्यों आसीन हो? देश के किसी नेता ने इसके विरुद्ध आवाज उठाई क्या? कायस्थ स्वामी विवेकानन्द के नाम पर वर्तमान केन्द्र सरकार बहुत कुछ कर रही है, परन्तु किसी कायस्थ को शङ्कराचार्य की गद्दी पर आसीन करने की बात कहने की किसी में हिम्मत नहीं है। हिन्दुओं में आज भी असंख्य रोग हैं, जो यह शोर मचाते हैं कि हिन्दू एक जीवन शैली है, उन्होंने मन्दिरों में पशुबलि देने का

विरोध कब किया?

म.प्र. में एक मन्दिर में सुरा का प्रसाद दिया जाता है। इसका जीवन शैली से क्या लेना-देना है? बुराई से टकराने की हिम्मत किस नेता में है?

बहुत पुरानी बात है। कोलकाता में काली माई के मन्दिर में बकरे की बलि-प्रथा के विरुद्ध पं. रामचन्द्र जी वीर ने मरण व्रत रखा था। आर्यसमाज ने उनका समर्थन किया। ठाकुर रवीन्द्रनाथ जी ने उनको समर्थन दिया। देश भर मे अन्य हिन्दू संस्थाओं ने इस विषय में मौन साधे रखा। हिन्दू जब धर्म न होकर जीवन शैली है तो फिर पशुबलि जीवन शैली का कैसा अंग है? फिर जाति-पाँति कां इसमें क्या स्थान है? फिर कोई जाट, यादव, गुर्जर शंकराचार्य क्यों नहीं बन सकता? हिन्दू जाति को रोग-मुक्त करने के लिये हम तो जन्म की जाति-पाँति का विरोध करते ही रहेंगे।

आर्यसमाज और धर्मप्रचार- आर्य समाज के पत्रों में स्कूलों में यज्ञ-हवन करते कुछ बच्चों के चित्र छपते रहते हैं। कभी भारी भीड़ वाले सत्संगों-सम्मेलनों का कोई फोटो हमने देखा नहीं। धर्म प्रचार की लहर चलाने के लिये सूझबूझ वाले दीवाने मिशनरी, विद्वान् संन्यासी कहाँ हैं। उस स्कूल का परिणाम ८० प्रतिशत रहा, अमुक का ९० प्रतिशत रहा। ऋषि मिशन को ये संस्थायें क्या देती हैं। राजस्थान में जोधपुर के एक बड़े सरकारी अधिकारी (सेवानिवृत्त) ने आर्यसमाज पर भयङ्कर प्रहार किया। स्कूल चुप, लीडर चुप, आर्यसमाजी नेता चुप। उत्तर देने के लिये धर्मवीर तो अब हैं नहीं। क्या बनेगा समाज का? कभी जब गणपति शर्मा, दर्शनानन्द स्वामी, महात्मा मुंशीराम जी जैसे दिलजले थे तब मिर्जा हैदर देहलवी ने वैदिक धर्म को नमन करते हुये पशुओं में जीवन का होना स्वीकार किया। आत्मा को अनादि माना। सृष्टि रचना का काल बहुत प्राचीन माना। विज्ञान और धर्म का घनिष्ठ सम्बन्ध स्वीकार किया। चमत्कार तो फिर मिथ्या सिद्ध हो गये।

क्या उत्तर दिया जाय?- अजमेर ऋषि उद्यान में शिविर चल रहा था। मेरा साक्षात्कार लिया जा रहा था। बहुत श्रद्धालु प्रश्नोत्तर सुन रहे थे। एक प्रश्न पूछा गया कि आप पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के बहुत प्रेरक प्रसंग सुनाते हैं। आप यह बतायें कि वे थे कैसे? इस प्रश्न का क्या उत्तर देता? उन्हें बताया आज पूरे विश्व में उन जैसा तपस्वी महाप्रतापी ब्रह्मचारी है ही नहीं। ईश्वर ने वह सांचा ही अब तोड़ दिया, सो क्या बताऊँ कि वे ऐसे थे।

एक ने पूछा, आप में इस आयु में इतना जोश, इतना उत्साह है। आपकी स्मरण शक्ति ऐसी.......इसका रहस्य क्या है। उन्हें कहा, इसका उत्तर मैं क्यों दूँ। आज स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी, महाशय कृष्ण जी, पूज्य उपाध्याय जी, पं. शान्तिप्रकाश जी, देहलवी जी होते तो इस प्रश्न का उत्तर वही दे सकते थे। मेरे निर्माता वही महापुरुष थे। मैं तो एक ग्रामीण बालक था। उन्होंने कुछ बना दिया। इनका स्मरण करते ही न जाने मुझमें जोश व उत्साह कहाँ से आ जाता है। आप पं. नरेन्द्र जी हैदराबाद से इसका जवाब माँगते तो अच्छा होता।

आचार्य नन्दकिशोर का त्याग भाव- आचार्य नन्दकिशोर जी की कर्मण्यता व सेवा-भाव को सब जन जानते हैं। उनका त्याग भाव सबके लिये एक उदाहरण है। आज के युग में वैराग्य और विरक्ति की चर्चा करने वाले तो बहुत हैं, संगठन व समाज के लिये त्याग करने वाले महात्मा विरले ही मिलेंगे। आचार्य नन्दकिशोर जी के एक भक्त ने इटारसी (मध्यप्रदेश) के पास जमानी में उन्हें एक विशाल उपजाऊ भूखण्ड भेंट किया। वह सज्जन वहाँ वैदिक धर्म प्रचार का केन्द्र स्थापित करवाना चाहते थे।

आचार्य नन्दकिशोर जी ने वह बहुत मूल्यवान् भूमि परोपकारिणी सभा के नाम पंजीकृत करवा दी है। सभा की ओर से वहाँ प्रचार केन्द्र स्थापित किया जा चुका है। वर्ष भर कई कार्यक्रम आयोजित होते रहेंगे। धन को धूलि समझकर समर्पण भाव से कार्यरत आचार्य नन्दकिशोर जी का जीवन आर्य मात्र के लिये प्रेरणा स्रोत रहेगा। नेपाल में आपने नेपाली भाषा में बहुत साहित्य छपवाया है। हमें गर्व है कि इस युग में परोपकारिणी सभा के पास एक ऐसा विरक्त कर्मठ तपस्वी है।

सब व्यवहार करने वालों को चाहिये कि जो मनुष्य जिस काम में चतुर हो उसको उसी काम में प्रवृत्त करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.२०

परोपकारिणी सभा, अजमेर के तत्त्वावधान में
१३४ वाँ ऋषि बलिदान समारोह

दिनांक २७, २८, २९ अक्टूबर २०१७, शुक्र, शनि, रविवार

महापुरुषों का यज्ञमय जीवन हमको प्रत्येक कदम पर प्रेरणा व मार्गदर्शन देता रहता है, जिस कारण हम उनके ऋणी हो जाते हैं। इस ऋण से मुक्त होने का एक ही उपाय है- महापुरुषों की विचारधारा का यथासामर्थ्य प्रचार-प्रसार। विराट व्यक्तित्त्व महर्षि दयानन्द की समग्र मानव जाति ऋणी है। इस ऋण को चुकाने का स्वर्ण-अवसर ऋषि के १३४वें बलिदान वर्ष के उपलक्ष्य में हमको प्राप्त हुआ है। इस अवसर पर परोपकारिणी सभा भव्य समारोह का आयोजन करने जा रही है।

ऋग्वेद पारायण यज्ञ- '**ऋग्वेद पारायण यज्ञ**' की पूर्णाहुति बलिदान समारोह के अन्तिम दिन २९ अक्टूबर को प्रातः १० बजे होगी। यज्ञ के ब्रह्मा **श्री सत्यानन्द वेदवागीश** होंगे। यह यज्ञ ऋषि-उद्यान अजमेर की यज्ञशाला में सम्पन्न होगा।

वेदगोष्ठी - प्रतिवर्ष की परम्परा के अनुसार इस वर्ष भी अन्तर्राष्ट्रीय दयानन्द वेदपीठ दिल्ली एवं अनुसन्धान केन्द्र परोपकारिणी सभा के संयुक्त प्रयास से वेदगोष्ठी का आयोजन किया जायेगा। इस गोष्ठी में देश के विविध विद्वान् अपने शोधपूर्ण मौलिक विचार प्रस्तुत करेंगे। इस वर्ष वेदगोष्ठी का विचारणीय बिन्दु है- **वेदों में शिक्षा के सिद्धान्त**। जो विद्वान् गोष्ठी में शोधपत्र प्रेषित करना चाहते हैं, वे १५ अक्टूबर तक सभा के पते पर प्रेषित करवा देवें। २७, २८, २९ अक्टूबर को ऋषि बलिदान समारोह के कार्यक्रमों के साथ-साथ वेदगोष्ठी भी चलती रहेगी। ऋषि-भक्त इसे सुनने का लाभ उठा सकते हैं।

चतुर्वेद कण्ठस्थीकरण वेद प्रतियोगिता- प्रतिवर्ष आयोजित की जाने वाली इस प्रतियोगिता में २१ वर्ष तक के छात्र भाग ले सकते हैं। किसी भी वेद को आद्योपान्त स्मरण करके इस प्रतियोगिता में भाग लिया जा सकता है। जो छात्र जिस वेद पर गत वर्षों में पारितोषिक ग्रहण कर चुके हैं, वे उस वेद से अतिरिक्त वेद स्मरण करके भाग ले सकते हैं। २७ अक्टूबर को परीक्षा एवं २८ अक्टूबर को पुरस्कार-वितरण का कार्यक्रम होगा। जो छात्र इस प्रतियोगिता में भाग लेना चाहते हैं, वे अपने-अपने गुरुकुलों, आश्रमों, संस्थानों से आचार्य द्वारा अधिकृत पत्रक पर २-छायाचित्र सहित अपना परिचय १५ अक्टूबर, २०१७ तक आचार्य महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, अजमेर के पते पर भेज दें।

सम्मान - प्रतिवर्ष विशिष्ट वैदिक विद्वान्, विदुषियों एवं कार्यकर्त्ताओं को इस समारोह में सम्मानित किया जाता है। इस वर्ष भी सम्मान -समारोह होगा। जिसमें अनेक विद्वान्-विदुषियों एवं कार्यकर्त्ताओं को सम्मानित किया जायेगा।

अक्टूबर के आरम्भ में अजमेर में हलकी ठंड होने लगती हैं, ऋषि उद्यान खुले में होने से सर्दी का प्रभाव कुछ अधिक रहेगा। रात्रि में कम्बल ओढ़ने जैसी ठण्ड रहेगी। जो समूह में रहना चाहते हैं उनकी निवास व्यवस्था ऋषि उद्यान में होगी और जो अपने निवास की व्यवस्था होटल-धर्मशाला में करवाना चाहते हैं, कृपया वे सभा कार्यालय से पूर्व सम्पर्क कर अग्रिम राशि जमा करवा कर कमरा आरक्षित करवा लें। सभी से विशेष निवेदन है कि अपने आने की सूचना कम से कम एक सप्ताह पूर्व दे देवें, जिससे संख्या का अनुमान होकर तदनुसार व्यवस्था की जा सके। सभी से निवेदन है कि १३४वें बलिदान समारोह में अपने परिवार व समाज के सभी कार्यकत्ताओं सहित पधार कर महर्षि को हार्दिक श्रद्धांजलि प्रदान करें, महर्षि दयानन्द के स्वप्न को साकार करने हेतु प्रेरणा उत्साह प्राप्त कर प्रचार-प्रसार को एक नई चेतना प्रदान करें।

ऋषि मेले में आमन्त्रित विद्वान् एवं विशिष्ट अतिथि- प्रो. राजेन्द्र जिज्ञासु-अबोहर, श्री सुरेश अग्रवाल-प्रधान सार्वदेशिक सभा, आचार्य विजयपाल-झज्जर, श्री सोमपाल शास्त्री- पूर्व केन्द्रीय कृषि मन्त्री, श्री सज्जनसिंह कोठारी-लोकायुक्त जयपुर, श्री विजयसिंह भाटी-जोधपुर, श्री विनय आर्य-मन्त्री दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, श्री इन्द्रजित् देव-यमुनानगर, डॉ. प्रशस्यमित्र शास्त्री- रायबरेली, डॉ. रघुवीर वेदालंकार-दिल्ली, स्वामी ऋतस्पति-होशंगाबाद, डॉ. ब्रह्ममुनि-महाराष्ट्र, डॉ. वेदपाल-बड़ौत, आचार्या सूर्या देवी- शिवगंज, डॉ. विक्रम कुमार 'विवेकी'-चण्डीगढ़, श्री तपेन्द्र वेदालंकार-(रि. आई.ए.एस.) जयपुर, आचार्य विरजानन्द दैवकरणि-झज्जर, श्री कन्हैयालाल आर्य-गुरुग्राम, डॉ. वेदप्रकाश 'विद्यार्थी'-दिल्ली, डॉ. रामचन्द्र-कुरुक्षेत्र, श्री दीनदयाल गुप्त-कोलकाता, श्री शत्रुघ्न आर्य-राँची, डॉ. जगदेव-रोहतक, डॉ. रमेशचन्द्र 'जीवन'- चण्डीगढ़, डॉ. वीरेन्द्र अलंकार-चण्डीगढ़, डॉ. ज्ञानप्रकाश-गुरुकुल काँगड़ी, डॉ. रूपकिशोर-गुरुकुल काँगड़ी, डॉ. सोमदेव 'शतांशु'-गुरुकुल काँगड़ी, डॉ. राजेन्द्र विद्यालंकार-कुरुक्षेत्र, डॉ. विनय विद्यालंकार, डॉ. कृष्णपाल सिंह-जयपुर, श्री सत्यानन्द आर्य- दिल्ली, श्री जगदीश शर्मा-जयपुर, श्री शिवकुमार चौधरी-इन्दौर, श्री जयदेव आर्य-राजकोट, श्री ठा. विक्रमसिंह-दिल्ली, डॉ. उदयन- तेलंगाना, श्री प्रकाश आर्य-महू, श्री सत्यपाल पथिक, प. भूपेन्द्र सिंह आदि।

इस समारोह हेतु आपका आर्थिक सहयोग आयकर की धारा '८०-जी' के अन्तर्गत दिए गये प्रावधान के अनुरूप कर मुक्त होगा। विदेश में निवास कर रहे धर्मप्रेमी सज्जन स्वदेश में होने वाले इस समारोह हेतु मुक्त हस्त से दान देकर देश का गौरव बढ़ाएँ। सभा को भारतीय शासन द्वारा विदेशों से दानस्वरूप दी गई राशि को प्राप्त करने की छूट प्राप्त है। आपका सहयोग ही हमारा सम्बल है। शुभकामनाओं सहित।

गजानन्द आर्य	डॉ. सुरेन्द्र कुमार	ओम मुनि
संरक्षक	कार्यकारी प्रधान	मन्त्री

प्राचीन भारत में शिक्षा का स्वरूप

आचार्य उदयवीर शास्त्री

अध्ययन का महत्त्व- रामायण, महाभारत एवं अन्य भारतीय साहित्य के अनुसार आर्य मानस के लिये अध्ययन एक पवित्र वस्तु है। वह ज्ञान का उद्‌गम स्थान है, जो अमरत्व की ओर ले जाता है, (**विद्ययाऽमृतमश्नुते**, यजु. ४०/१४)। अत: ज्ञान प्राप्ति के लिये अनवरत परिश्रम प्राचीन ऋषि, मुनियों एवं जन समाज के जीवन का एक महान् लक्ष्य था, जिन्होंने घोषित किया था कि अध्ययन की ओर उपेक्षा का भाव कभी न आने देना चाहिये, (**स्वाध्यायान्मा प्रमद**, तै. उप. १/२/१)। महाभारत में कहा है कि विद्याहीन मानव की दशा शोचनीय हो जाती है, (**अविद्यः पुरुषः शोच्यः**, महा. ५/३९/७७)। इसलिये जीवन की प्रत्येक स्थिति में मानव के मुख्य कर्त्तव्यों में अध्ययन एक आवश्यक एवं महान् कर्त्तव्य है, इस बात को भारतीय साहित्य में बार-बार दोहराया गया है। मानव जीवन का चतुर्थांश केवल इसी कार्य को पूरा करने के लिय नियत था। ब्रह्मचर्य, दृढ़ अभ्यास और कठोर परिश्रम का समय माना गया था, जबकि देश के नवयुवक पवित्र मूल ग्रन्थों का अध्ययन करते थे और आगे जीवन में आने वाले कर्त्तव्यों के लिये अपने आपको तैयार करते थे।

यह निश्चित है कि उस काल में अध्ययन का आदर बहुत किया जाता था, पर रामायण, महाभारत आदि साहित्य में अध्यापन-विधि के बहुत न्यून वृत्तान्त उपलब्ध होते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि शिक्षा सम्बन्धी बहुत से महत्त्वपूर्ण पहलू सम्पूर्ण रीति से उपेक्षित किये गये हैं। सम्भव है वर्णन के समय साधारण अथवा सर्व जन-विदित समझ कर ही उनकी उपेक्षा कर दी गई हो। ऐसी स्थिति में रामायण, महाभारत आदि के वर्णनों में विभिन्न आश्रमों और उनके निवासियों की जो सूक्ष्म झलक मिलती है, उसके आधार पर ही एक विचारक को अपना परिणाम प्रस्तुत करना पड़ता है।

संस्था-प्रतीत होता है कि रामायण, महाभारत आदि में दो विभिन्न प्रकार की शिक्षा पद्धति प्रचलित थी। द्रोण और कृप जैसे विद्वान् आचार्य अपने शिष्यों के घरों व आश्रय में रहकर ही उनको विद्याध्ययन कराते थे, पर दूसरे धौम्य, भारद्वाज आदि विद्वान् ऋषियों ने छात्रों को अपने घर में रखकर ही विद्याध्ययन कराया। प्राचीन साहित्य में यह प्रणाली 'गुरुकुल-प्रणाली' के नाम से प्रसिद्ध है, जो कालान्तर में सार्वजनिक शिक्षा संस्था के रूप में प्रस्फुटित हुई। सम्भवत: 'गुरुकुल' शब्द पहले गुरु कुटुम्ब तक ही सीमित था, कालान्तर में कुलपति के द्वारा चलाई जाने वाली संस्था को सूचित करने लगा। पहली स्थिति में छात्र गुरु के समीप आकर रहता, आसपास की बस्ती में अपने निर्वाह के लिये भिक्षा ले आता और गुरु को अर्पण कर देता, उस में से कुछ अंश गुरु स्वीकार करता और शेष छात्रों में वितरित कर दिया जाता था। इस परम्परा में एक गुरु के पास छात्रों की संख्या बहुत सीमित रहती थी। दूसरी स्थिति में कुलपति द्वारा सञ्चालित संस्था सहस्रों छात्रों के अध्ययन का प्रबन्ध करती थी। इसका व्यय भार जनता और राज्य वहन करते थे। ऐसे गुरुकुलों में विद्यार्थी का प्रवेश एक नवीन अविनाशी जन्म माना जाता था,

आचार्यशिष्टा या जातिः सा दिव्या साजरामरा
म.भा. १२/१०८/२०।।

आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः
अथर्व ११/५/३।।

आचार्य योनाविह ये प्रविश्य भूत्वा गर्भं ब्रह्मचर्यं चरन्ति
म. भा. ५/४/४६

जहाँ पितृतुल्य आचार्य अपने शिष्यों की पवित्र पीढ़ी को सन्मार्ग दिखलाने के लिए अपने आपको सर्वात्मना अर्पण कर देता था। गुरु के अधीन शिष्यों की यह पीढ़ी 'ब्रह्मवंश' के नाम से प्रसिद्ध थी-

देववंशान् ब्रह्मवंशान् पितृवशांश्च शाश्वतान्
म.भा. १२/११/१९)।

महाभारत (१/३) के प्रारम्भ में धौम्य और बैद के गुरुकुल छोटे और अपने घर में ही सीमित थे। दुर्वासा मुनि

के सञ्चालन में एक बहुत बड़ा आश्रम था, जिसमें लगभग दस सहस्र विद्यार्थी निवास व अध्ययन करते थे-

शिष्यायुतसमापेतः, म.भा. ३/२६२/८।। तथा

अभ्यगच्छत् परिवृतः शिष्यैरयुतसम्मितैः

म.भा. ३/२६३/२

मार्कण्डेय मुनि का आश्रम भी एक बहुत बड़ी संस्था के रूप में रहा होगा और वहाँ एक अच्छी संख्या में छात्र रहते होंगे। एक बार स्वयं कुरुराज युधिष्ठिर ने इस आश्रम का अवलोकन किया था (म.भा. ३/२७१/४८)। इसी प्रकार कण्व मुनि का आश्रम भी अपने समय में एक प्रामाणिक शिक्षा-संस्थान था, जहाँ विद्या की अनेक शाखाओं के अध्ययन का प्रबन्ध था (म.भा. १/७०/१८)। प्रतीत होता है कि रामायण में वर्णित भारद्वाज और वाल्मीकि मुनि के आश्रम भी अपने समय में महान् शिक्षणालय थे, (राम. ४/१२३/५१ तथा २/५५/९, ११।। १/४), जहाँ एक साथ सहस्रों छात्र विद्याध्ययन करते थे। ऐसा ज्ञात होता है कि इन संस्थाओं का परस्पर कोई सम्बन्ध न था, प्रत्येक संस्था अपने रूप में एक स्वतन्त्र शिक्षा-केन्द्र रहता था।

संस्थाओं का उपयुक्त स्थान- वेद का स्वाध्याय उस काल में विशेष रूप से पवित्र माना जाता था और इसके लिये मनुष्यों की भीड़-भाड़ से दूर किसी एकान्त स्थान का चुनाव किया जाता था। व्यास मुनि का आश्रम हिमालय के शान्त व स्वास्थ्यकर वायु मण्डल में निर्मित किया गया था। कण्व और परशुराम के आश्रम का स्थान स्पष्ट रूप से सूचित करता है कि शिक्षा प्रायः एकान्त जङ्गल में दी जाती थी-

शैलराजस्य विविक्ते पार्वते तटे पाराशर्यो महातपोवने वेदानध्यापयामास

-म.भा. १२/३२७/२६।।

मालिनीमभितः....तपोवनमनोरमे.

म.भा. १२/३२७/२६

फिर भी पुरोहित और दूसरे अध्यापकों द्वारा लौकिक साहित्य घनी आबादी में भी पढ़ाया जाता था। द्रोण ने धनुर्विद्या की शिक्षा हस्तिनापुर में दी और द्रुपद के पुत्रों ने राज्य शासन-विधि की शिक्षा घर में ही प्राप्त की। अर्जुन ने उत्तरा को संगीत और नृत्य विराट के राजमहल में ही सिखाये। वृषपर्वा का मन्त्री शुक्र राजधानी में रहता था और शिष्यों को शिक्षा देता था। फिर भी ऐसे उदाहरण बहुत कम हैं और सामान्यतया राजघराने तक सीमित हैं। राजकुमारों की शिक्षा सामान्य रूप से घर के बाहर निजी अध्यापक के अधीन हुआ करती थी। पर राजघरानों के लिये भी ऐसा कोई व्यवस्थित नियम नहीं था। द्रुपद ने अपने तेजस्वी सहपाठी द्रोण के साथ भारद्वाज के आश्रम में शिक्षा पाई थी। दशरथ के पुत्र राम आदि ने विश्वामित्र के आश्रम में जाकर धनुर्विद्या तथा अन्य कलाओं का अध्ययन किया था।

विद्यार्थी घर में रहता है या नगर में अथवा जङ्गल में, यह इतना महत्त्वपूर्ण नहीं था, किन्तु उसको अपने अध्यापक अथवा आचार्य के मार्गदर्शन के अधीन रहना चाहिये, यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण समझा जाता था और अध्यापक भी केवल उसकी शिक्षा के लिये नहीं, प्रत्युत आचरण और सांस्कृतिक योग्यता के लिए भी अपने आपको उत्तरदायी समझता था, केवल शिक्षक के रूप में उसकी योग्यता अप्रधान समझी जाती थी

आचार्यः कस्मात्? आचारं ग्राहयति

निरु. १/४/१२

प्रवेश के योग्य छात्र- प्राचीन भारत में छात्र से अध्ययन अथवा निवास आदि के लिए किसी प्रकार का शुल्क नहीं लिया जाता था। कोई भी अध्यापक किसी छात्र को केवल इस आधार पर संस्था में प्रवेश के लिए निषेध नहीं कर सकता था कि वह किसी प्रकार का शुल्क देने में असमर्थ है। धन लेकर वेदों का अध्ययन निन्दनीय समझा जाता था (म.भा. १२//३४/६) और जो व्यक्ति लोभ आदि के कारण कभी ऐसा कर बैठता था, उसे समाज व शास्त्र की प्रेरणा के अनुसार प्रायश्चित करना पड़ता था। विद्यार्थी का चरित्र और विद्या-प्राप्ति के लिए उसकी पात्रता ही प्रवेश के लिए कसौटी थी। निरुक्त में वर्णित यास्क के सिद्धान्तानुसार

विद्या ह वै ब्राह्मणमाजगाम गोपाय मां शेवधिष्टेहमस्मि, असूयकायानृजवेऽयताय न मा ब्रूया वीर्यवती तथा स्याम्

२/४

श्री कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश दिया कि जो अयोग्य

है, जिसने तप, भक्ति और गुरु-सेवा की उपेक्षा की है, और जो ईश्वर अथवा महान् आत्माओं के प्रति अविश्वास रखता है, उसको ज्ञान का रहस्य नहीं बताना चाहिए, (म.भा. ६/४२-४७।। भग.गी. १८/६७) महर्षि व्यास ने अपने शिष्यों को समावर्तन के समय जो उपदेश किया है, उसमें विद्यार्थी के चरित्र और योग्यता पर अधिक बल दिया गया है। छात्र की जातीय स्थिति तथा उसके अन्य सद्गुणों को भी सावधानी से देखा जाता था। वेदों की शिक्षा ब्राह्मणों को और जिसको वेद के लिए कार्य करने की इच्छा होती, उसको दी जाती थी

ब्राह्मणाय सदा देया ब्रह्मशुश्रूषवे तथा,
ब्रह्मलोकनिवासं यो ध्रुवं समभिकांक्षति

म.भा. १२/३२७/४३-४७

ब्रह्मलोक की प्राप्ति के लिए दृढ़ झुकाव को ही वेद के अभ्यास के लिए वास्तविक योग्यता का चिह्न माना जाता था। रामायण, महाभारत तथा अन्य प्राचीन भारतीय साहित्य के अनुसार ब्रह्मचर्य द्वारा ही विद्या की प्राप्ति हो सकती थी

विद्या हि सा ब्रह्मचर्येण लभ्या म.भा. ४४४/२
ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत

अथर्व. ११/५/१९

यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते
पदं संग्रहेण ब्रवीमि ओ३मित्येतत्

कठो. १/२/१५।। तथा प्रश्न. ५/३।। मुण्ड. ३/१/५)।

यह नियम वेद के स्वाध्याय के विषय में विशेष रूप से माना जाता था। इससे यह अनुमान करना भ्रांतिपूर्ण न होगा कि प्राचीन भारत में जिस छात्र की वेदादि के अभ्यास के प्रति दृढ़ प्रवृत्ति होती थी तथा जो सांसारिक प्रलोभनों से विचलित नहीं होता था, अन्य सब धन्धों से अलग रहकर उसी कार्य में अपने आपको नियन्त्रित रख सकता था और जीवन के उस भाग को पूर्ण संयम के साथ व्यतीत कर सकता था वही छात्र शिक्षा की संस्था में प्रवेश के योग्य समझा जाता था

विद्यार्थी वा त्यजेत् सुखम्, म.भा. ५/४०/६)।

प्रवेश की आयु-रामायण, महाभारत में विद्यार्थी के गुरुकुल-प्रवेश की आयु का प्रमाण कहीं स्पष्ट रूप से उपलब्ध नहीं होता। स्मृति तथा वैदिक सूत्र ग्रन्थों से प्राप्त वृत्तान्त के आधार पर उपनयन संस्कार विद्यार्थी अवस्था के प्रारम्भ में किया जाता था। प्राय: सब ही प्राचीन आचार्यों के लेखक इस विषय में समान हैं कि ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य का उपनयन यथाक्रम ८ वें ११ वें और १२ वें वर्ष में हो जाना चाहिए, अथर्ववेद भी उपनयन को गुरु के कुल में प्रवेश पाने के लिए एक आवश्यक आज्ञापन के रूप में स्वीकार करता है (अथर्व. ११/५/३ **आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्त:**)। फिर भी इस संस्कार और तत्सम्बन्धी आयु के प्रमाण की सामग्री रामायण महाभारत में बहुत कम मिलती है। आश्रम में प्रवेश पाने के लिए अथवा वेद के अभ्यास के लिए कितनी आयु में उपनयन को आवश्यक योग्यता के रूप में समझा जाता था और इस नियम का दृढ़ता के साथ सार्वजनिक रूप में पालन किया जाता था, इस प्रकार के स्पष्ट उल्लेख रामायण आदि में उपलब्ध नहीं होते। कभी-कभी द्रोण, भीष्म, युधिष्ठिर यज्ञोपवीत पहने हुए वर्णित मिलते हैं, परन्तु वह संस्कार कब अथवा कितनी आयु में किया गया था, इसकी सूचना हमें नहीं मिलती। महाभारत में प्राय: प्रत्येक नेता को वेद-विद्या व धनुर्विद्या आदि में प्रवीण बताया है। रामायण में भी राम आदि तथा हनुमान आदि को वेद-विद्या आदि में पारंगत बताया गया है, परन्तु विद्या-प्राप्ति के प्रारम्भ में नियमानुसार उनके उपनयन आदि संस्कार के विषय में कोई संकेत नहीं मिलते। महाभारत में केवल दो स्थलों पर उपनयन संस्कार का उल्लेख मिलता है, परन्तु वहाँ भी विद्यार्थी की आयु का निर्देश नहीं किया गया। प्रथम युधिष्ठिर के पुरोहित धौम्य ने क्रमश: द्रौपदी के सब ही पुत्रों का उपनयन कराया-

जातकर्माण्यानुपूर्व्या चूडोपनयनं तथा चकार
विधिवत् धौम्यस्तेषां भरतसत्तम

म.भा. १/२२१/८७

यहाँ ग्रन्थकार जातकर्म से उपनयन तक सब संस्कारों की एक साथ गणना करता है। इस संस्कार की विधि के अनन्तर राजकुमारों ने वेद का अध्ययन किया, ऐसा कहा गया है। किन्तु संस्कार के समय प्रत्येक की आयु कितनी थी इसका उल्लेख वहाँ नहीं है।

दूसरा महत्त्वपूर्ण उपनयन संस्कार महाभारत में व्यास

के ज्येष्ठपुत्र शुक का मिलता है। यह कहा जाता है कि उसके जन्म के अनन्तर उसके पिता व्यास ने शुकदेव के सब संस्कारों की विधि को पूर्ण करके वेद के अभ्यास व अध्ययन के लिये शिष्य रूप से शिक्षा संख्या में प्रवेश दिया। इस प्रसंग में भी छात्र की आयु के सम्बन्ध का कोई संकेत नहीं है। रामायण में भी दशरथ के पुत्रों के नामकरण आदि संस्कार इस रूप में वर्णित है-

अतीत्यैकादशाहं तु नामकर्म तथाकरोत्।
ज्येष्ठं रामं महात्मानं भरतं कैकयीसुतम्।।
सौमित्रिं लक्ष्मणमिति शत्रुघ्नमपरं तथा।
वसिष्ठः परमप्रीतो नामानि कुरुते तदा।।
तेषां जन्मक्रियादीनि सर्वकर्माण्यकारयत्।

(१/१८/२१२-४)

जातकर्म के आगे 'आदि' पद लगाकर यहाँ भी उपनयन पर्यन्त संस्कारों के विधान का संकेत किया गया है। रामायण के व्याख्याकारों ने इस प्रसंग का ऐसा ही अर्थ किया है और यह सम्भव है। इसके आगे राम आदि का विविध विद्याओं में पारंगत होने का वर्णन है। किन्तु कौन-सा संस्कार किस आयु में किया गया और उपनयन के अनन्तर विद्याभ्यास के लिए राम आदि ने गुरुकुल में प्रवेश कितनी आयु में किया-इसका कोई संकेत प्रस्तुत प्रसङ्ग में नहीं है। प्रतीत होता है कि उस काल में वह एक ऐसी साधारण व सार्वजनिक बात थी कि इसका विशेष रूप से लेखकों ने उल्लेख करना अनावश्यक समझा। क्योंकि उपनयन की आयु का निर्देश वैदिक सूत्र ग्रन्थों में वर्णित किया हुआ था और वह समस्त समाज से अनुमोदित था, इसलिये एक सार्वजनिक एवं सर्वानुमोदित घटना को बार-बार उल्लेख करने की उपेक्षा की गई है।

कुछ आधुनिक विद्वानों का विचार है कि रामायण, महाभारत में प्राप्त सामग्री के प्रकाश में स्मृतियों द्वारा दी हुई आयु अत्यन्त सन्देहयुक्त प्रतीत होती है। सम्भवतः सबसे पहले रामायण, महाभारत के काल में लोगों ने उपनयन को अधिकता से उपेक्षित किया हो। इस संस्कार के उल्लेख की ऐसी उपेक्षा से सुरक्षित परिणाम यही दिखाई देता है कि प्राचीन समय के दूसरे साहित्य के समान रामायण, महाभारत भी सब द्विजों के लिए यह विधि संस्कार के रूप में आवश्यक थी, ऐसा नहीं मानते। वे उसकी विशेष अधिकार के रूप में गणना करते थे, जो कि जाति के भवन में प्रवेश के लिए एक अधिकारपूर्ण आज्ञापत्र देता था। अतः उस समय के अधिकारी नेता आश्रम में प्रवेश के लिए निश्चित आयु की व्यवस्था नहीं करते। यह सम्भव है कि भिन्न-भिन्न अध्ययन क्रम और विशिष्ट विषय के ग्रहण की योग्यता के अनुसार आयु भी बदलती रही हो। इसलिए इसमें आश्चर्य करने की बात नहीं है कि कभी तरुण अध्यापक अपने से आयु में बहुत बड़े शिष्यों को पढ़ाता हुआ मिलता है।

वस्तुतः आधुनिक विद्वानों की उपर्युक्त धारणा रामायण महाभारत की भावना के साथ मेल नहीं खाती। उस समय के समाज ने इस संस्कार की सार्वजनिक रूप में उपेक्षा की हो, यह भावना रामायण, महाभारत की प्रतीत नहीं होती। महाभारत में द्रौपदी के पुत्रों का धौम्य ऋषि के द्वारा उपनयन कराये जाने का जो उल्लेख किया गया है, उस पर गम्भीरतापूर्वक ध्यान देने से यह स्पष्ट हो जाता है कि उक्त धारणा महाभारत आदि के कहाँ तक समीप है। वहाँ यह स्पष्ट लेख है-

'चकार विधिवत् धौम्यस्तेषां भरतसत्तम।'

यहाँ 'विधिवत्' पद के ऊपर ध्यान देना चाहिए। इस पद के द्वारा यह निश्चित परिणाम निकलता है कि संस्कार की विधि का निर्देश करने वाला कोई अन्य शास्त्र था, जिसके अनुसार धौम्य ने इस संस्कार को सम्पन्न कराया। उस शास्त्र में ही प्रत्येक संस्कार की अन्य आवश्यक विधियों के समान आयु का भी निर्देश होना चाहिये। जैसे महाभारत में संस्कार की अन्य आवश्यक विधियों का उल्लेख नहीं है, उसी प्रकार आयु का भी उल्लेख नहीं है। वस्तुतः रामायण, महाभारत विधि-शास्त्र नहीं हैं। अन्य विधिशास्त्रों में आयु का निर्देश भी स्पष्ट रूप में उपलब्ध होता है। पर भारतीय प्राचीन साहित्य के अवगाहन से यह निश्चित परिणाम प्रतीत होता है कि विधिपूर्वक आश्रम में प्रवेश के लिए एक निश्चित आयु का बन्धन था, जो प्रायः आठ से बारह तक व्यवस्थित थी, पर विभिन्न विद्याओं के अभ्यास क्रम के अनुसार प्रत्येक आयु के व्यक्ति के लिए आश्रमों के द्वार सदा खुले रहते थे।

परोपकारी के सुधी पाठकों के लिए आवश्यक सूचना

परोपकारी शुल्क भेजते समय नये या पुराने ग्राहक के उल्लेख के साथ-साथ ग्राहक संख्या अवश्य लिखें, अन्यथा शुल्क जमा करने में कठिनाई आती है। फलस्वरूप पाठकों के पास पत्रिका नहीं पहुँच पाती है। ऐसे ही अपना नाम हटवाते व जुड़वाते समय दूरभाष संख्या सहित अपना पूरा विवरण लिखकर भेजें। ई.एम.ओ. के द्वारा शुल्क भेजने वाले ग्राहक भी सन्देश के साथ अपनी ग्राहक संख्या सहित पूरा विवरण भेजें। परोपकारी पत्रिका कार्यालय से निरन्तर भेजी जाती है, फिर भी जिन लोगों के पास पत्रिका का कोई अंक प्राप्त ना हुआ हो तो कृपया पत्र या दूरभाष द्वारा हमें सूचित करें, ताकि हम वह अंक पुन: भेज सकें, साथ ही अपने डाकघर में इसकी जाँच आदि भी करें।

धनराशि भेजने हेतु सूचना

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित सभा है एवं उनके कार्यों को आगे बढ़ाने के लिय कृत संकल्प है। सभा द्वारा ऋषि के स्वनानुरूप गुरुकुल, संन्यास एवं वानप्रस्थाश्रम, ध्यान शिविर, वैदिक साहित्य का प्रकाशन, देश में प्रचार, परोपकारी पत्रिका के माध्यम से जन जागरण, भव्य अतिथिशाला, भोजनशाला आदि अनेक प्रकल्पों का संचालन हो रहा है। ये सभी कार्य आर्यजनों के सात्विक दान से ही होते हैं। अत: दानी महानुभावों से निवेदन है कि वेद, ईश्वर, दयानन्द के इस कार्य में अपना सहयोग अवश्य प्रदान करें।

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उन पर '**परोपकारिणी सभा**' अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया, राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-091104000057530 **बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।**
IFSC - IBKL0000091

२. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या - 10158172715 **बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**
IFSC - SBIN0007959

जैसे वेद के वेत्ता विद्वान् लोग वेदानुकूल मार्ग से परमेश्वर को जानकर उत्तम ज्ञान से उसका सेवन करते हैं, वैसे ही जगदीश्वर सब को उपासनीय अर्थात् सेवन करने के योग्य है, वैसे ज्ञान के विना ईश्वर की उपासना कभी नहीं हो सकती क्योंकि विज्ञान ही उसकी अवधि है।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४१

वैचारिक क्रान्ति के लिए सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

आर्यसमाज का वेद प्रचार : एक नूतन प्रयोग

रामनिवास 'गुणग्राहक'

आर्य समाज की प्रचार-पद्धति के सम्बन्ध में विचार करने से पहले एक बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि संसार के धार्मिक कहे जाने वाले मत-पन्थों के प्रचार-अभियान और आर्य समाज के प्रचार-कार्य में बड़ा अन्तर है। पाखण्ड और अन्धविश्वास को धर्म स्वीकार कर चुका भारतीय जनमानस पहले पाखण्ड से अच्छे और सरल लगने वाले दूसरे पाखण्ड को सहजता से स्वीकार कर लेता है। मूर्ति राम की न सही तो कृष्ण की भी चलेगी, गणेश की न सही तो हनुमान की भी चलेगी। यही परम्परा आज यहाँ तक पहुँच गई कि शिव का स्थान साईं ले सकता है और गली-गली में बनने वाले भोले-भैरों के मन्दिर से जिनकी कामना सिद्ध नहीं होती वे उसी कथित श्रद्धा से किसी मियाँ की मजार या कब्र पर जाकर भेंट पूजा चढ़ाने चले जाते हैं। आर्य समाज इन सबसे अलग हटकर बुद्धि और तर्क की बात करता है जिन्हें हमारे पुराणी और कुरानी बन्धु सैकड़ों सहस्रों वर्ष पूर्व धार्मिक सोच से दूर भगा चुके हैं। यही कारण है कि तर्क और बुद्धि से काम लेने वालों को आज के धर्माचार्य व धर्मभीरू लोग बिना सोचे समझे नास्तिक कह डालते है। वैसे यह एक कड़वा सच भी है कि तर्क और विज्ञान की बात करने वाले हमारे बुद्धिजीवी आज नास्तिक बनकर ही रह गये हैं। ऐसे में आर्य समाज को अपनी प्रचार-पद्धति को एक नया धारदार रूप देने के लिए वर्तमान पद्धति की जाँच-परख करते रहना चाहिए।

यह सही है कि आर्य समाज की पहली पीढ़ी ने जितना व जो कुछ वेद-प्रचार व समाज-सुधार का काम किया वो सब इसी प्रचार-पद्धति से किया। परन्तु इसी के साथ यह भी मानना ही पड़ेगा कि विगत २०-३० वर्षों का अनुभव चिल्ला-चिल्ला कर कह रहा है कि अब यह प्रचार-पद्धति अपना प्रभाव खो चुकी है। कारण जो भी रहे हों, चाहे हमारी जीवन-शैली की व्यवस्था हो या टी.वी., मोबाइल से चिपके रहने की प्रवृत्ति, चाहे हमारे उपदेशकों की निष्ठा, स्वाध्यायशीलता में कमी आने के कारण या हमारे कर्णधारों-पदाधिकारियों के मन-मस्तिष्क में जड़ें जमा चुकी उठा-पटक की प्रवृत्ति के साथ माला और फोटो की मानसिकता-कुछ भी हो आज का सच यह है कि हमारी वर्तमान प्रचार-पद्धति तो हम आर्य कहलाने वालों के जीवन में भी कोई सुधार व निखार लाती नहीं दिख रही है। ऐसे में प्रत्येक वेद-भक्त और ऋषि-भक्त आर्य का कर्त्तव्य है कि वह आर्य समाज के प्रचार-कार्य को प्रखर और प्रभावी बनाने की दिशा में गम्भीरता से विचार करे और उसे व्यावहारिक बनाने के लिए कुछ ठोस कार्य भी करे। मैंने इस दिशा में बहुत लम्बे समय से अनेक सुधी आर्य जनों व मित्रों से विचार-विमर्श करके हमारी प्रचार-पद्धति को नया रूप देने का छोटा-सा प्रयास किया है। सुधी पाठक इस पर और विचार करके अपने अमूल्य सुझाव देकर इसे और प्रभावोत्पादक बना सकते हैं या जिन्हें यह अच्छा लगे वो अपने पदाधिकारियों से मिलकर चर्चा करके इस पर व्यवहार प्रारम्भ कर सकते हैं।

सम्भव है कुछ आर्य जनों को यह अटपटा लगे, कुछ को इस पर स्वार्थजन्य आपत्तियाँ भी हो सकती हैं, मगर मेरा मानना है कि वेद-प्रचार की यह शैली आर्य समाजों में प्रचलित हो जाए तो इसके प्रत्यक्ष और उत्साहवर्धक परिणाम एक-दो वर्ष में ही प्रकट होने लगेंगे। हाँ, जिन्हें आर्य समाज से अधिक व्यक्ति जुड़ने पर पद चले जाने का डर लगता हो, उनके लिए कोई कुछ नहीं कर सकता है। अब पढ़िये कि आर्य समाज को नवजीवन देने के लिए हमें अपनी प्रचार-पद्धति में क्या कुछ बदलना पड़ेगा। यद्यपि आज आर्य समाज में ऐसे उपदेशक बहुत कम संख्या में हैं जो नित्य नियमित रूप से संध्योपासना व स्वाध्याय करते हों। जितने भी हों, प्रारम्भ के लिए ऐसे विद्वान् हमारे मध्य हैं जो संध्या व स्वाध्याय दैनिक कर्म के रूप में करते हैं। जो नहीं भी करते हैं, जब सिर पर आ पड़ेगी तो सब करने लग जाएँगे। आज समस्या यह है कि आर्य समाज में 'सब धान सत्ताइस का सेर' बिकता है। हमें सिद्धान्तनिष्ठ, धर्मात्मा,

निष्कलंक, निर्लोभी और सरल स्वभाव के स्वाध्यायशील किसी एक विद्वान् को अपने आर्य समाज में प्रचार कार्य के लिए कम से कम ८-१० दिन के लिए सादर आमन्त्रित करना चाहिए। उससे पहले आर्य समाज के पदाधिकारी व श्रेष्ठ सभासद मिलकर प्रचार-योजना इस ढंग से बनायें- प्रतिदिन प्रात:काल सुविधानुसार किसी पदाधिकारी या श्रद्धालु आर्य के घर यज्ञ व पारिवारिक सत्संग रखें, जिसमें एक घण्टा तक व्याख्या युक्त यज्ञ हो और एक घण्टा धर्म, ईश्वर, वेद आदि की विशेषताएँ लिये हुए परिवार समाज व राष्ट्र से जुड़े हुए कर्त्तव्यों के पालन का प्रेरणापरक प्रवचन होना चाहिए। जिस परिवार में यज्ञ व सत्संग हो, वह अपने परिचितों व पड़ौसियों को प्रेमपूर्वक आमन्त्रित करे। घर मीठे चावल बनाए, स्विष्टकृत आहुति व बलिवैश्वदेव की आहुतियाँ देकर प्रसाद रूप में सबको वही यज्ञशेष प्रदान करे।

प्रात:काल इतना करके दिन में किसी विद्यालय में कार्यक्रम रखने के लिए पहले ही सम्बन्धित प्रधानाध्यापक आदि से मिलकर सुविधानुसार ४०-५० मिनट का समय तय कर लें। आर्य समाज के एक या दो सज्जन आमन्त्रित विद्वान् को सम्मान पूर्वक विद्यालय ले जाएँ और विद्या व विद्यार्थियों से जुड़े हुए विषय पर सरल व रोचक भाषा शैली में वेद व वैदिक साहित्य के प्रमाणपूर्वक प्रवचन करें। वेद व आर्य समाज के प्रति श्रद्धा बढ़ाने की भावना का ध्यान पारिवारिक यज्ञ-सत्संग में भी रखना चाहिए और विद्यालयों में भी। कार्यक्रम के अन्त में सबको निवेदन करें कि वे सायंकाल आर्य समाज में होने वाली धर्म चर्चा-सत्संग में पुण्य लाभ प्राप्त करने हेतु अवश्य पधारें। सुविधानुसार एक दिन में दो-तीन विद्यालयों में प्रवचन रख सकते हैं। हमारी आज की पीढ़ी बहुत तेज-तर्रार है, उसके मन-मस्तिष्क में धर्म और ईश्वर को लेकर अनेक प्रश्न खड़े होते हैं। लेखक लड़के-लड़कियों के कॉलेजों के अनुभव के आधार पर कह सकता है कि युवक-युवतियाँ बड़े तीखे प्रश्न करते हैं। ऐसे में आर्य समाज का गौरव कोई स्वाध्यायशील व साधनाशील आर्य विद्वान् ही बचा सकता है। नई पीढ़ी को प्रश्नों व शंका समाधान की छूट दिये बिना हम नई पीढ़ी के मन-मस्तिष्क को धर्म, ईश्वर व आर्य समाज की ओर नहीं मोड़ सकते, इसलिए किसी विद्वान् को बुलाने से पहले हम इस बात का ध्यान रखें और उन्हें इसकी सूचना भी अवश्य कर दें।

दिन में इतना कुछ करके रात्रि में सबकी सुविधा व अधिकतम लोगों के आगमन की सम्भावना को ध्यान में रखते हुए दो घण्टे का कार्यक्रम बनायें। दिन में अगर अधिक प्रश्न व शंकाएँ रखी गई हों तो उनके उत्तर रात्रिकाल के सत्संग में रखे जा सकते हैं या समाज के सुधीजन कार्यक्रम बनाते समय कुछ उपयोगी व सामयिक विषय निश्चित कर सकते हैं। इस प्रकार एक दिन का यह कार्यक्रम है, ऐसे ही ८-१० दिन का कार्यक्रम बनाकर हम इसके अनुसार प्रचार कार्य करके समय, श्रम व संसाधनों का सटीक सदुपयोग करके बहुत लाभ प्राप्त कर सकते हैं। प्रसंगवश एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण तथ्य की ओर आर्य जनों का ध्यान आकर्षित करना बहुत आवश्यक है। प्रचार-कार्य में प्रवचन और सत्संग से अधिक भूमिका साहित्य की होती है। दु:ख की बात यह है कि आज आर्यसमाज में स्वाध्याय की प्रवृत्ति और स्वाध्याय के योग्य प्रभावी साहित्य दोनों में निरन्तनर गिरावट आती जा रही है। प्रचार को प्रभावी बनाने के लिए आवश्यक है कि हम ऋषि दयानन्द के लघु ग्रन्थों, स्वामी श्रद्धानन्द, पं. गुरुदत्त विद्यार्थी, पं. लेखराम, पं. चमूपति, स्वामी दर्शनानन्द जी, पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय, पं. रामचन्द्र देहलवी और स्वामी वेदानन्द जी जैसे सिद्धान्तनिष्ठ विद्वानों के साहित्य को बहुत बड़ी मात्रा में प्रकाशित करा कर अल्प मूल्य में उपलब्ध करायें।

मुझे क्षमा करें, हमारे आज के प्रतिष्ठित कहलाने वाले तथा विभिन्न आर्य संस्थानों से पुरस्कृत होते रहने वाले लेखक और अन्तर्राष्ट्रीय कथाकारों की वाणी और लेखनी के नामधारी लेखकों ने इधर-उधर से दान लेकर अपने कई-कई पोथे छपवाकर अल्प मूल्य के साथ बाजार में छोड़ रखे हैं। पुरानी पीढ़ी के लेखकों के ग्रन्थ छपाने के लिए कोई दानी आगे नहीं आता या बहुत कम आते हैं। आर्य समाज को इस दिशा में भी गम्भीरता से सोचना पड़ेगा। पहली-दूसरी पीढ़ी के गम्भीर, सिद्धान्तजीवी वैदिक विद्वानों के साहित्य का उद्धार करना आज की बहुत बड़ी माँग है, ऐसा न हो कि कल बहुत देर हो जाए। वेद प्रचार

को जीवन्त बनाने के लिए सत्साहित्य व सिद्धान्तनिष्ठ प्रवचन-सत्संग ही एक मात्र उपाय है। हमारे सुधी पाठक इस पर गम्भीरता से विचार करके देखेंगे तो लगेगा कि बिना लम्बी-चौड़ी भागदौड़ के, बिना किसी ताम-झाम के, बिना किसी बड़े खर्चे के एक सीमित आय वाले आर्यसमाज भी इसका लाभ ले सकते हैं। मैंने इसके प्राय: सभी पक्षों को लेकर बहुभाँति चिन्तन किया है, उस चिन्तन के आधार पर मैं पाठकों को विश्वास दिला सकता हूँ कि प्रचार की यह पद्धति अपना ली जाए तो आर्य समाज का कायाकल्प होने में ५-१०वर्ष से अधिक समय नहीं लगेगा। हाँ, इसके साथ-साथ हमें अपनी संगठन सम्बन्धी कमियों को भी दूर करना पड़ेगा।

कुछ लोग यह कहते हैं कि आर्यसमाज का सांगठनिक ढाँचा आज के समय के अनुकूल नहीं है। ऐसे लोग लोकतान्त्रिक पद्धति की न्यूनताएँ गिनाने लगते हैं, लेकिन वे महर्षि दयानन्द की वेद-विद्या से प्राप्त दूरदृष्टि को समझ नहीं पाते। नियम-सिद्धान्त कितने ही उच्चस्तर के हों, अगर व्यक्ति निम्न स्तर के हैं तो अतिमहत्त्वपूर्ण तथ्यों की अनदेखी करके, साधारण या मनोनुकूल तथ्यों पर अधिक ध्यान केन्द्रित करके वे अच्छे-अच्छे नियम-सिद्धान्तों का दुरुपयोग कर डालते हैं। आर्य समाज के संगठन सम्बन्धी नियम-उपनियमों के साथ भी हमारे कर्णधार लम्बे समय से यही करते चले आ रहे हैं। भविष्य में कभी इस विषय पर भी अपना चिन्तन पाठकों के सामने रखेंगे। अभी प्रचार सम्बन्धी चर्चा को व्यावहारिक रूप देने की आवश्यकता है। जो सज्जन इस पद्धति को अच्छा व उपयोगी मानते हों और ऐसा करना चाहते हों, वे अधिक जानकारी के लिए लेखक से संपर्क करके इसके बारे में समस्याओं व सम्भावनाओं पर विचार करके किसी भी प्रकार का सहयोग प्राप्त कर सकते हैं।

इस बात का निश्चय है कि ब्रह्मचर्य्य, उत्तम शिक्षा, विद्या, शरीर और आत्मा का बल, आरोग्य, पुरुषार्थ, ऐश्वर्य, सज्जनों का संग, आलस्य का त्याग, यम-नियम और उत्तम सहाय्य के विना किसी मनुष्य से गृहाश्रम धारा जा नहीं सकता।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.३१

ऋषि मेला २०१७ हेतु स्टॉल आवंटन

प्रति वर्ष की भांति इस वर्ष ऋषि मेला २७, २८, २९ अक्टूबर शुक्र, शनि, रविवार २०१७ को ऋषि उद्यान में आयोजित होगा। उसमें आर्य जगत् का साहित्य, हवन सामग्री, अन्यान्य सामग्री की स्टॉल लगती हैं। प्रति स्टॉल किराया १००० रु. निर्धारित है। जिसकी राशि पहले जमा होगी उसी क्रम से स्टॉल का आवंटन होगा। जिन महानुभावों को जितनी स्टॉल की आवश्यकता है, उसी अनुरूप राशि बैंक ड्राफ्ट द्वारा या नकद जमा करावें।

स्टॉल सुविधा:- कारपेट, दो टेबल, दो कुर्सी, २ ट्यूब लाइट प्रति स्टॉल। **स्टॉल साइज-** ७.५×१५ फीट।

ध्यातव्य- **१.** स्टॉल में रखी टेबल, कुर्सी आदि पूर्व निर्धारित सामग्री को इधर-उधर या अन्य स्टॉल में न बदलें। **२.** अतिरिक्त सामग्री की आवश्यकता हो तो टैन्ट हाउस के कर्मचारी से सम्पर्क कर प्राप्त करें तथा निर्धारित राशि तुरन्त भुगतान करें। **३.** बिस्तर, रजाई, चादर, तकिया को टेन्ट हाउस कर्मचारी से प्राप्त कर निर्धारित राशि जमा करा दें। **४.** स्टॉल व्यवस्थापक से स्टॉल संख्या, राशि की रसीद दिखाकर प्राप्त करें। बिना पूर्व अनुमति के स्टॉल में सामान न रखें, न अधिकृत करें। **५.** आपके सक्रिय सहयोग व अनुशासन की अपेक्षा है। अनियमितता को स्थान न देवें। ६. अपना मोबाइल (चलभाष) नवम्बर देना अति आवश्यक है। ७. आप अपना स्थाई पता अवश्य देवें। ८. स्टॉल में आप पुस्तकें/दवाइयाँ/अन्य सामग्री का उल्लेख अवश्य करें। ९. स्टॉल आवंटन हेतु अग्रिम राशि जमा करावें, अन्यथा विचार सम्भव नहीं होगा। १०. एक पासपोर्ट फोटो भिजवावें, जो परिचय पत्र के साथ अंकित हो। उसमें स्टॉल आवंटन संख्या भी अंकित किया जाएगा। ११. स्टॉल आवंटन की सूचना निर्धारित अवधि में दी जायेगी।

वैदिक पुस्तकालय अजमेर
द्वारा प्रकाशित व उपलब्ध नये संस्करण

१. सत्यार्थ प्रकाश में क्या है? **लेखक** - **प्रो. धर्मवीर,** **प्रकाशक**- परोपकारिणी सभा, अजमेर,
पृष्ठ संख्या- ३२ **मूल्य** - रु. १५/-

प्रस्तुत पुस्तक का डॉ. धर्मवीर जी के युवापन की रचना है। इस पुस्तक को पं. भारतेन्द्रनाथ जी (महात्मा वेदभिक्षु) ने डॉ. धर्मवीर जी से आग्रहपूर्वक लिखवाया था। पहली बार इसे सन् १९७५ में महात्मा वेदभिक्षु जी ने ही प्रकाशित किया था। एक लम्बे अन्तराल के बाद परोपकारिणी सभा ने इसका पुनर्प्रकाशन किया है। इस पुस्तक को पढ़कर नये से नया व्यक्ति सत्यार्थप्रकाश के महत्व को समझ सकता है अर्थात् यह पुस्तक आर्यसमाज के प्रचार में सहायक सिद्ध हो सकती है। आर्य महानुभावों से अनुरोध है कि इसे अधिक से अधिक संख्या में खरीदकर नई पीढ़ी तथा नये लोगों को वितरित करें तथा प्रकाशनों से भी निवेदन है कि अधिक से अधिक संख्या में इसे मंगायें ताकि लोग उसे खरीद सकें। इस ग्रन्थ को पढ़ने से ऋषि दयानन्द के अमरग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश को पढ़ने की प्रेरणा मिलती है। सत्यार्थप्रकाश की समस्त विषयवस्तु को इस ग्रन्थ में समाहित किया गया है। पाठक इसे पढ़कर लाभ उठायेंगे, ऐसा हमारा विश्वास है।

२. महर्षि दयानन्द का पत्र-व्यवहार (२ भाग में)
मूल्य - रु. ८००/- **पृष्ठ संख्या - प्रथम व द्वितीय भाग-६९६+६९६**
महर्षि दयानन्द का महत्त्वपूर्ण पत्र-व्यवहार मूल्य - रु. ४००/- **पृष्ठ संख्या - ६१६**

ऐतिहासिक महत्त्व का ग्रन्थ है। इस संस्करण की यह विशेषता है कि पत्र और उसका उत्तर साथ-साथ दिये गए हैं। आर्य जाति और आर्यावर्त्त के उत्त्थान की महती आकांक्षा ऋषिवर के पत्रों में स्पष्ट झलकती है। माननीय डॉ. वेदपाल जी द्वारा सम्पादित यह ग्रन्थ पठनीय एवं संग्रहणीय है। साज-सज्जा और मुद्रण भी उत्तम है। समाप्त होने से पहले- पहले क्रय कर लेवें तो अच्छा रहेगा।

३. 'नवयुग की आहट',महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन-चरितः
मूल्य - रु. ६०/- पृष्ठ संख्या- १९२

१०० से अधिक उपशीर्षकों एवं १३ अध्यायों में लिखा गया ऋषि का यह अनुपम जीवन चरित है। लेखक हैं- ऋषि मिशन के दीवाने, आर्यजाति के प्रहरी, दिल जले आर्य साहित्यकार प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु। पुस्तक में आप जान पायेंगे कि ऋषि का पाखण्ड-खण्डन, सामाजिक दोषों के निराकरण, स्त्री-शिक्षा, अछूतोद्धार, वेदोद्धार, सामाजिक पुनर्जागरण, राष्ट्र-उद्धार के क्षेत्र में क्या योगदान है तथा उनके समकालीन और परवर्ती महापुरुष उनके विषय में क्या कहते हैं।

४. इतिहास की साक्षीः लेखक- प्रा. राजेन्द्र जिज्ञास मूल्य - रु. ५०/- **पृष्ठ संख्या - ९६**

९६ पृष्ठों की इस पुस्तक में विद्वान् लेखक ने महर्षि दयानन्द सरस्वती एवं पं. श्रद्धाराम फिल्लौरी के सम्बन्ध में तथ्यात्मक जानकारी दी है। श्रद्धाराम फिल्लौरी के हाथ के लिखे पत्र की एवं अन्य ऐतिहासिक दस्तावेजों की फोटो कापियाँ इसमें दी हैं, जो अन्यथा दुर्लभ हैं।

५. असली महात्मा (हिन्दी) मूल्य - रु. २००/- **पृष्ठ संख्या - २४७**

यह पुस्तक मूलरूप से तेलुगु में लिखी गई है। लेखक श्री एम.वी.आर. शास्त्री ने जिस शोधपूर्ण ढंग से और जिस सरसता से इस पुस्तक को लिखा है, उससे दस्तावेजों में रुचि रखने वालों और उपन्यास में रुचि रखने वालों के लिये भी यह एक अतुलनीय ग्रन्थ है। हिन्दी में अनुवाद करते समय श्री जे.एल. रेड्डी ने लेखक के मूल भावों को जिस दक्षता से संजोया है, उससे हिन्दी पाठकों को ये ऐतिहासिक दृष्टि वाला ग्रन्थ किसी उपन्यास से कम नहीं लगेगा।

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या - **0008000100067176**

IFSC - PUNB0000800

पाठकों के विचार

सत्य की कसौटियाँ-

हम सभी को प्रत्येक कार्य वा कर्म को करने के पहले सत्य और असत्य, लाभदायक और हानिकारक होने का विचार करके ही करना चाहिए, तभी हम अनजाने पाप कर्मों से बच कर अच्छे पुण्यमय कर्मों को कर सकते हैं। बगैर इसके हम अज्ञानता में असत्य को सत्य एवं लाभदायक मानकर अनजाने त्रुटियों पर त्रुटियाँ कर सकते हैं।

हमें तथ्यों, कर्मों को सत्य की तीन कसौटियों यानि (१) वेद शास्त्रों के आधार पर, (२) वैज्ञानिक तथ्यों, शोधों से एवं (३) प्रत्यक्ष प्रमाण अर्थात् स्वयं एवं अन्य मनुष्यजनों द्वारा अनुभूति कर, लाभदायक प्रक्रिया को निर्धारित करना है जो सर्वकल्याणकारी हो। यदि इसके अतिरिक्त कोई अन्य कसौटी संज्ञान में आये तो उसको भी लेना चाहिए। सत्य वही होगा जो तीनों कसौटियों पर खरा उतरे।

हम कुछ तथ्यों की सत्यता एवं हानि-लाभ का उपरोक्त कसौटियों पर विचार करते हैं कि-

उदाहरण १- घृत का दीपक जलाना- हम प्राय: कहते हैं कि घृत विशेषकर गाय के घृत का दीपक जलाना बहुत लाभदायक हैं। स्वामी रामदेव जी ने भी 'प्राणायाम रहस्य' पुस्तक में घर के अन्दर प्राणायाम करते समय घृत का दीपक जलाने को लिखा है कि इससे वायु शुद्ध होता हैं। दीपक जलाने में जल रही सामग्री का दहन धीरे-धीरे होता है और इससे चारों ओर प्रकाश फैलता है, परन्तु कोई अन्य लाभ या सुगन्धादि प्रत्यक्ष में प्रतीत नहीं होता है। पहले हम शास्त्रों पुस्तकों की कसौटी पर देखते हैं। **सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास-११** में विभिन्न प्रकार के अग्नियों में 'लौ-युक्त अग्नियों' के प्रभाव दर्शाने हेतु, उदाहरण हेतु स्वामी दयानन्द जी ने ज्वालामुखी सम्बन्धी एक प्रश्न के उत्तर में लिखा है कि ''जैसे बघार के घी के चमचे में ज्वाला आ जाती है, अलग करने से वा फूँक मारने से बुझ जाती, थोड़ा-सा घी को खा जाती, शेष छोड़ जाती, उसी के समान वहाँ भी है। जैसे चूल्हे की ज्वाला में जो डाला जाय, सब भस्म होता, जंगल वा घर में लग जाने से सबको खा जाती है।'' क्योंकि बघार, चूल्हे, जंगल, घरों आदि में लगी अग्नि ''लौ-युक्त'' ही होती है, अत: यह अग्नि विध्वसंक यानी पदार्थों के मूल रूप एवं गुणों को छिन्न-भिन्न कर भस्म यानि नष्ट करने वाली होती है और इससे हमें ऊष्मा, प्रकाश यानि गर्मी के साथ कार्बन डाईआक्साइड गैस आदि ही मिलती है। यह बातें हम सब स्वयं सत्यापित कर सकते हैं और अपने जीवन में दिन-प्रतिदिन प्रत्यक्ष में देखते हैं। जब बघार की ज्वाला यानी लौ, बघार के घृत को खा यानी नष्ट कर जाती है तो इसी प्रकार वह दीपक के घृत को ज्वाला अर्थात् लौ धीरे-धीरे प्रकाश, उष्मा पैदा करते हुए खा जाती है। बघार एवं दीपक की ज्वालाएँ एक समान हैं तो उनके प्रभाव आदि समान ही होगें, क्योंकि समस्त अग्नियाँ, ज्वालाएँ एवं घृत तथा हवा के घटक ऑक्सीजन में हो रही रासायनिक क्रियाएँ आदि जड़ ही होती हैं जिनका गुण, व्यवहार सभी दहनों के साथ एक जैसा होगा, कुछ भी भिन्न नहीं हो सकता है। अब दूसरे आधार अर्थात् विज्ञान द्वारा देखते हैं। मेरे ज्ञान में आर्य साहित्य में विज्ञान के आधार पर कुछ नहीं लिखा है कि घृत आदि के दहन के बाद कौन-कौन से पदार्थ, रसायन पैदा होते हैं और उनके गुण क्या-क्या होते हैं। इसलिए हम आधुनिक विज्ञान की पुस्तकों आदि को देखते हैं । विज्ञान को पुस्तकों एवं गूगल सर्च के पन्नों के अनुसार जब भी कोई पदार्थ लौ के साथ जलता है, तब उस पदार्थ के समस्त रसायनों एवं वायु के घटक की आक्सीजन में रासायनिक क्रिया होती है जिसके फलस्वरूप कार्बन डाईआक्साइड गैस, कुछ अन्य गैसें अल्प मात्रा में, कुछ पानी भाप के रूप में एवं अत्यधिक ऊर्जा, गर्मी, प्रकाश पैदा होता है, जिससे वातावरण में ऊष्मा एवं प्रकाश फैलता है, अत: यही घृत के दीपक के जलाने से भी मिलता है जिससे वायु में कोई लाभदायक रसायन नहीं फैलते हैं अर्थात् घृत के दीपक जलाने में हमें प्रकाश के अतिरिक्त कोई लाभ नहीं मिलता है, बल्कि कार्बन डाईआक्साइड गैस द्वारा हवा प्रदूषित होती है। अब हमें निर्णय लेना है कि घृत का दीपक जलाना चाहिए या नहीं। जब हम जलते हुए

घृत के दीपक को एकाएक बुझाते हैं तब १-२ सैकण्ड के लिए थोड़ा सा सफेद रंग का धुआँ हवा में उठता है और उसी समय घृत की थोड़ी-सी सुगन्ध हवा में फैलती है।

उदाहरण २-फूलों का तोड़ना- वर्तमान में कई आर्य समाजियों द्वारा विभिन्न अवसरों पर फूलों से सजावट की जाती है एवं फूलों की माला पहनी व पहनायी जाती है। क्या ऐसा करना सत्य, उचित, लाभदायक है इसको हम विभिन्न कसौटियों पर परखते हैं। **पहली कसौटी** 'शास्त्रों' पर परखते हैं। सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास ११ में मूर्ति-पूजा की १५ हानियों में पंद्रहवीं हानि-''परमेश्वर ने पुष्पादि सुगन्ध, वायु-जल के दुर्गन्ध निवारण और आरोग्यता के लिये बनाये हैं, उनको पुजारी तोड़कर नष्ट कर देते हैं। पूर्ण खिलने के समय तक उसकी सुगन्ध होती है, उसका नाश मध्य में ही कर देते हैं। पुष्पादि कीच के साथ मिल-सड़कर उल्टा दुर्गन्ध उत्पन्न करता है। इसलिये मूर्तिपूजा करने में पाप होता है। इत्यादि पापों का मूल कारण पाषाणादि मूर्ति-पूजा भी है।'' इस प्रकार फूलों को तोड़ना एवं माला पहनना, पहनाना भी पाप है। फूलों की सजावट, माला पहनना-पहनाना आदि का किसी वेद, सत्यार्थप्रकाश, संस्कार विधि आदि पुस्तकों में वर्णन नहीं है। **दूसरी कसौटी विज्ञान**-एक फूल जितने दिन पेड़ में लगा रहता है, उतने दिन उसमें सुगन्धित रसायन हर क्षण बनते रहते हैं और वह हवा में फैलकर लाखों लोगों को नासिका से ग्रहण होकर लाभ देते रहते हैं। जिस क्षण फूल को तोड़ा जाता है, उसी क्षण से सुगन्ध बननी बन्द हो जाती है और उसकी सड़न प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। सड़न में कई गैसें जैसे-कार्बनडाईआक्साइड, फॉर्मेल्डीहाइड, इथेनॉल आदि हानिकारक गैसें, हवा को प्रदूषित करती हैं तथा हवा में रोगाणु भी फैलते हैं। **तीसरी कसौटी प्रत्यक्ष प्रमाण**-हम प्रत्यक्ष में देखते हैं कि समारोह के समाप्त होने के बाद जहाँ फूलों को रखा जाता है या फेंका जाता है, वह वहीं सूखने, मुरझाने एवं सड़ने लगते हैं और कई दिनों बाद उनसे बदबू भी आने लगती है। इस प्रकार फूलों को तोड़ना पूर्णतः अवैदिक, आर्यसमाज के विरुद्ध है और पर्यावरण के हित में नहीं है तथा विज्ञान सम्मत भी नहीं है। जिस कार्य से किसी का अहित होता है, वह कार्य पापमय होता है।

उपरोक्तानुसार अन्य कार्यों व कर्मों, तथ्यों को भी विभिन्न कसौटियों पर कसकर परखकर सत्य लाभदायक विधि का निर्धारण किया जाना चाहिए। आप विद्वानों से निवेदन है कि इस लेखनी पर अपना सुझाव, राय, टिप्पणी अथवा इसमें जो कमी गलती लगे तो उसे अवश्य ही सूचित करें। जिसका मैं उत्तर, निराकरण भेजूंगा और आपका आभारी होऊँगा।

वेदप्रकाश गुप्ता,
लखनऊ, उत्तर प्रदेश

विशेष सूचना

परोपकारी-पत्रिका के सभी पाठकों एवं आर्यजनों से निवेदन है कि डॉ. धर्मवीर जी से सम्बन्धित कोई पत्र, चित्र, ऑडियो, वीडियो आदि आपके पास हों तो कृपया हमें सूचित करें।

डॉ. धर्मवीर जी के जीवन पर प्रकाशित होने वाली स्मारिका के लिए जिन भी महानुभावों के पास उनसे सम्बन्धित कोई भी संस्मरण, विचार या कविता आदि हों, वे भी अतिशीघ्र सभा को भेजने का कष्ट करें, ताकि आपके लेख स्मारिका में प्रकाशित किये जा सकें।

सम्पर्क सूत्र- ०९४६०४२११८३, ०१४५-२४६०१६४

ई-मेल-psabhaa@gmail.com

परोपकारिणी सभा, दयानन्द आश्रम, केसरगंज,

अजमेर-३०५००१ (राज.)

ओ३म्

परोपकारिणी सभा

दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर (राज.) पिन. ३०५००१ दूरभाष– ०१४५–२४६०१६४

वेदगोष्ठी–२०१७

मान्यवर सादर नमस्ते।

आशा करता हूँ कि आप स्वस्थ सानन्द होंगे। आपको सुविदित है कि सद्‌भावी विद्वानों के सहयोग से सदा की भांति इस वर्ष भी अन्तर्राष्ट्रीय दयानन्द वेदपीठ, दिल्ली तथा अनुसंधान विभाग परोपकारिणी सभा, अजमेर के संयुक्त तत्त्वावधान में ऋषि मेले के अवसर पर वेदगोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है। इस गोष्ठी में देश के अनेक भागों से पधारे प्रख्यात वैदिक विद्वान् निर्धारित विषयों पर अपने शोधपूर्ण विचार प्रस्तुत करते हैं। इनमें से चुने हुए शोध–पत्र परोपकारी व वेदपीठ की शोध–पत्रिका के माध्यम से प्रकाशित किये जाते हैं। जिससे जो लोग गोष्ठी में नहीं आ सकते वे भी लाभान्वित होते हैं। विद्वानों को भी इस विषय पर अधिक विचार करने का अवसर मिलता है। गत २८ वर्षों से गोष्ठी का आयोजन निरन्तर किया जा रहा है। अब तक निम्नलिखित बिन्दुओं पर विचार किया जा चुका है:–

१. ऋषि दयानन्द की वेदभाष्य शैली।	१२ नवम्बर, १९८८
२. वेद और कर्मकाण्डीय विनियोग।	०५ नवम्बर, १९८९
३. अथर्ववेद समस्या और समाधान।	२७ नवम्बर, १९९०
४. वेद और विदेशी विद्वान्।	१६ नवम्बर, १९९१
५. वैदिक आख्यानों का वास्तविक स्वरूप।	०१ नवम्बर, १९९२
६. वेदों के दार्शनिक विचार।	२८ नवम्बर, १९९३
७. सोम का वैदिक स्वरूप।	१२ नवम्बर, १९९४
८. पर्यावरण समस्या का वैदिक समाधान।	०३ नवम्बर, १९९५
९. वैदिक समाज व्यवस्था।	०१ नवम्बर, १९९६
१०. वेद और राष्ट्र।	२४ अक्टूबर, १९९७
११. वेद और विज्ञान।	०९ अक्टूबर, १९९८
१२. वेद और ज्योतिष।	१० नवम्बर, १९९९
१३. वेद और पदार्थ विज्ञान	०३ नवम्बर, २०००
१४. वेद और निरुक्त	१८ नवम्बर २००१
१५. वेद में इतिहास नहीं	०१ नवम्बर २००२
१६. वेद में कृषि व वनस्पति विज्ञान	३१ अक्टूबर २००३
१७. वेद में शिल्प	१९ नवम्बर २००४
१८. वेदों में अध्यात्म	११ नवम्बर, २००५
१९. वेदों में राजनीतिक चिन्तन	२७ नवम्बर, २००६
२०. ''वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है''	१६ नवम्बर, २००७
२१. वैदिक समाज विज्ञान	०५ नवम्बर, २००८
२२. सत्यार्थप्रकाश का ७ वाँ समुल्लास व वेद	२३ अक्टूबर, २००९
२३. सत्यार्थप्रकाश का ८ वाँ समुल्लास व वेद	१२ नवम्बर, २०१०
२४. सत्यार्थप्रकाश का ९ वाँ समुल्लास व वेद	०४ नवम्बर, २०११
२५. महर्षिदयानन्दाभिमत मन्तव्यः वैदिक परिप्रेक्ष्य	१६ नवम्बर, २०१२
२६. वेद और सत्यार्थप्रकाश का १२वाँ समुल्लास	८ नवम्बर, २०१३
२७.भारतीय मत सम्प्रदाय और वेद	३१ अक्टू. १,२ नव., २०१४
२८.भारतीय मत सम्प्रदाय और वेद	२०,२१,२२ नव., २०१५
२९.दयानन्द दर्शन की वेदमूलकता	४,५,६ नव., २०१६
३०. वेदों में शिक्षा के सिद्धान्त	२७,२८,२९ अक्टू., २०१७

श्री पं. इन्द्रजी विद्यावाचस्पति

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

माननीया ज्योत्स्ना जी ने पूज्य पं. इन्द्रजी पर एक छोटा सा लेख लिखने की जो प्रेरणा दी तो मेरा हृदय भाव विभोर हो गया। पं. इन्द्रजी आर्यसमाज तथा भारत के ही एक महान् और श्रेष्ठ लेखक नहीं हैं, वे विश्व के महान् साहित्यकारों की अग्रिम पंक्ति के एक यशस्वी लेखक थे। यदि वे पश्चिम में जन्मे होते अथवा किसी इस्लामी देश में जन्म लेते तो आज उनके नाम पर कई साहित्यिक संस्थान तथा विश्वविद्यालय स्थापित हुये होते, परन्तु इतिहास बोध से विहीन हिन्दू जाति ने मैक्समूलर, हरबर्ट स्पैन्सर, रोमाँ रोलाँ की माला तो बहुत फेरी, परन्तु श्री पं. इन्द्रजी के प्रति कृतज्ञता का प्रकाश करते हुये उनके व्यक्तित्व के अनुरूप क्या लिखा है?

मैंने उनसे प्रेरणा पाकर बहुत कुछ लिखा है। उनकी चर्चा भी करता ही रहता हूँ, परन्तु उन पर जी भरकर तो क्या, एक पूरा लेख भी कभी नहीं लिख पाया। मान्य ज्योत्स्ना जी ने आज मेरा यह साहित्यिक उपवास तुड़वा कर मेरा कल्याण कर दिया है। भगवान् इनका भला करेंगे ही।

कहाँ से आरम्भ करूँ?- मैंने पण्डितजी को बहुत पढ़ा है। उनके दर्शन भी किये। उनको सुना भी। उन पर लिखना कहाँ से आरम्भ करूँ? एक घटना याद आ गई। एक बार श्री क्षितीश जी ने अत्यन्त स्नेह से मुझसे पूछा, आप कई विषय लेकर (जैसे तड़प-झड़प में) छोटे-छोटे शीर्षक, उप शीर्षक देकर पाठकों की उत्सुकता जगा देते हैं। ये शीर्षक देना, कहाँ से, किससे सीखा? मैंने छूटते ही कहा, यह श्री महाशय कृष्ण जी से, पं. इन्द्रजी से और पं. भारतेन्द्रनाथ से सीखा।

क्षितीश जी मेरा उत्तर सुनकर गदगद हो गये और कहा, आपने जिन तीन यशस्वी लेखकों के नाम लिये है, वे सचमुच ऐसे ही थे।

मैंने पं. इन्द्रजी के एक सम्पादकीय का शीर्षक सुनाया तो वह झूम उठे। अंग्रेजों की किसी धमकी पर उनके सम्पादकीय का शीर्षक था-''लंगड़ा खूनी मैदान में''। लेखनी इस शीर्षक का मूल्याङ्कन करने में अक्षम है। पं. इन्द्र जी बहुत मननशील थे। उनका चिन्तन बड़ा गहन था। मैं यदा-कदा उनकी भावपूर्ण मार्मिक सूक्तियाँ उद्धृत करता रहता हूँ। उनकी लौह लेखनी व गम्भीर ज्ञान का आप भी कुछ रसास्वादन कीजिये- १. वही ज्ञान सफल है, जो अच्छे कर्मों के कारण बने और वही कर्म कल्याणकारी है जो बुद्धिपूर्वक किया जाय। २. ज्ञान के बिना कर्म अन्धा है तो कर्म के बिना ज्ञान लंगड़ा-लूला है। ३. न सत्य का ज्ञान हो और न अच्छे कर्म हों, फिर भी केवल किसी देवता में भक्ति रखने से मोक्ष हो जायगा, यह सिद्धान्त प्रमादियों को परितोष देने का साधन हो सकता है, उसमें कोई सार नहीं है। ४. अज्ञानी और पापी सच्ची उपासना कर सके और उससे मोक्ष की प्राप्ति हो जाय, यह केवल मन समझाने की बात है। ५. इस सृष्टि में जो चराचर पदार्थ हैं, ईश (ईश्वर) उन सब के बाहर और अन्दर व्याप्त है। **यह वाक्य ज्ञान का सार और कर्म का आधार है।** ६. पापियों को भी बुरा काम करने में भय, आशंका और लज्जा का अनुभव होता है, तभी तो अभियोग चलने पर इन्कारी हो जाते हैं और सफाई पेश करते हैं। ७. कोई जीवित मनुष्य क्षण भर भी कर्म किये बिना नहीं रह सकता। प्राकृतिक जगत् का संसर्ग उससे बरबस कर्म कराता है। ८. एक मनुष्य को जो कुछ प्रिय है, जिसे वह चाहता है और जिससे उसे सुख मिलता है, वह उसका धन है। ९. मनुष्य जीवन सत्कर्मों का फल है तो सत्कर्म करने का साधन भी है। उनकी सूझ विलक्षण थी। एक बार सार्वदेशिक सभा को किसी पुस्तक के प्रकाशनार्थ धन की आवश्यकता थी। इस हेतु (निधि में) धन नहीं था। कोषाध्यक्ष ला. नारायणदत्त जी अपने नियम के बड़े कड़े थे। वह लौटाने की शर्त पर भी किसी दूसरी निधि से उधार देने को तैयार नहीं थे। तब प्रधान पं. इन्द्र जी ने अपनी टिप्पणी से वातावरण ही बदल दिया। बोले, ''लालाजी चाहें तो सुई की आँख से हाथी को निकाल दें और न चाहें तो हाथी के निकलने के द्वार से सुई

भी न निकाल सकें।''

महात्मा मुंशीराम की दो जुडवाँ सन्तानें- सन् १८८८ में महात्मा मुंशीराम जी ने दो जुडवाँ बच्चों को जन्म दिया। इसी वर्ष 'सद्धर्म प्रचारक' का जन्म हुआ और इसी वर्ष पुत्ररत्न इन्द्रजी को जन्म देकर महात्मा जी अमर हो गये।

इन्द्र जी क्या-क्या थे?- आप कवि थे, इतिहासकार, उपन्यासकार और पत्रकार थे। उच्चकोटि के गीतकार थे। दिल्ली में हिन्दी पत्रकारिता के जनक आप ही थे। गवेषक, लेखक तो थे ही। स्वाधीनता सेनानी थे। एक ही फेफड़ा था, फिर भी मुल्तान जैसी नारकीय जेल में भी देशहित में यातनायें सहीं। अत्यन्त संयमी व सहनशील थे। बिना क्लोरोफॉर्म सूंघे कूल्हे की हड्डी टूटने पर ऑपरेशन करवा कर लोहे का सरिया उसमें डलवा लिया। एक बार भी आह का शब्द मुख से न निकला। प्रबन्ध-पटु, मधुर वक्ता और सभा-संस्था चलाने में कुशल थे। शास्त्रार्थ महारथी भी रहे। विश्व के जाने-माने जीवनी लेखक, धर्म, दर्शन व नीति-ग्रन्थों के मर्मज्ञ थे। उनके पास प्रेरक संस्मरणों का अटूट भण्डार था। उन्हें अपने शैशवकाल (अबोध अवस्था के) बीसियों रोचक व प्रेरक प्रसंग ज्यों के त्यों याद थे।

माता तो उनके शैशवकाल में चली गई। पिता श्री की (स्वामी श्रद्धानन्द जी की) बलिदान के घाट उतरने तक जी भरकर सेवा करते रहे। त्याग भावना पिता से बपौती में मिली। बिना सोचे दोनों भाइयों ने पैतृक सम्पदा दान करने के लिये पिता जी को सब अधिकार लिखकर दे दिये।

आर्यसमाज में मेरे कहने पर भी किसी ने उनका सूक्ति संग्रह नहीं किया। आपके साहित्य में छोटे-छोटे वाक्य होने से असंख्य सूक्तियाँ निकलती हैं। किसी भी जीवनी लेखक ने आर्यसमाज में पं. इन्द्र जी से कुछ प्रेरणा पाने या सीखने के लिये कृतज्ञता का प्रकाश नहीं किया। इन पंक्तियों के लेखक ने तो कई ग्रन्थों के प्राक्कथन में स्वयं को उनका ऋणी माना है। विश्व के सर्वहितकारी महान् विचारक, परोपकारी, देशोद्धारक पं. इन्द्र जी की ५७ वीं पुण्यतिथि पर हमारा शत्-शत् नमन!

परोपकारिणी सभा की दक्षिण-भारत प्रचार यात्रा

आर्य जनता को यह शुभ सूचना देते हुये हमें असीम हर्ष हो रहा है कि शूरता की शान स्वामी श्रद्धानन्द जी की संन्यास दीक्षा शताब्दी के उपलक्ष्य में सभा का एक दल १२ अगस्त सायंकाल की ट्रेन से दक्षिण भारत की प्रचार-यात्रा के लिये प्रस्थान करेगा। अपने अमर बलिदान से कुछ समय पहले श्री स्वामी जी ने जाति-पाँति, ऊँच-नीच, अस्पृश्यता उन्मूलन के लिये दक्षिण के सब प्रान्तों की एक ऐतिहासिक प्रचार यात्रा की थी।

स्वामी जी महाराज की इस शताब्दी पर परोपकारिणी सभा दक्षिण के आर्यों के सहयोग से इस प्रचार यात्रा द्वारा शताब्दी वर्ष को स्मरणीय बनाने का पूर्ण प्रयास करेगी। आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद तेलंगाना, आन्ध्र में कई कार्यक्रम आयोजित करके यश की भागी बन रही है। पं. नरेन्द्र जी की स्मृति में एक पुस्तक का विमोचन भी होगा। दक्षिण के आर्य हुतात्माओं-क्रान्तिवीरों की स्मृति में कई कार्यक्रम होंगे। श्याम भाई की बलिदान स्थली बीदर जेल और पं. नरेन्द्र जी के काले पानी मन्नानूर भी श्री लक्ष्मणसिंह (प्रधान-आन्ध्रप्रदेश सभा, हैदराबाद) के नेतृत्व में सब जायेंगे।

कर्नाटक के आर्य नेताओं ने भी कई ठोस कार्यक्रम बना रखे हैं। गुरुकुल शान्तिधाम में स्वामी ब्रह्मदेव जी के दर्शनार्थ जायेंगे। कालीकट में कार्यक्रम होगा। विश्व के १२० वर्षीय वैदिक विद्वान् (जो स्वामी श्रद्धानन्द जी के चरणों में रहे, एकमेव आर्य पुरुष हैं) पं. सुधाकर जी का उनके गृह पर सभा द्वारा सम्मान होगा। विस्तृत समाचार लौटकर दिये जायेंगे।

निवेदक

ओममुनि **राजेन्द्र जिज्ञासु** **नन्दकिशोर आचार्य**

९९५०९९९६७९ ९४१७६४७१३३

परोपकारिणी सभा, अजमेर

सब व्यवहार करने वालों को चाहिये कि जो मनुष्य जिस काम में चतुर हो उसको उसी काम में प्रवृत्त करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.२०

''न जाने कितने मेरे मन में वलवले आये''
पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय

- सोमेश 'पाठक'

अक्सर बड़ी बात को करने में शब्द सकुचा जाते हैं। खासकर तब, जब बात की शुरुआत की जा रही हो। कुछ ऐसी ही स्थिति फिलहाल मेरी भी है। शायद शब्द न मिलना ही शुरुआत हो, यही जानकर लेखनी उठा ली। बड़ी बात लिखना या कहना भी बड़ी बात ही होती है और फिर हमसे इस बात की उम्मीद भी तो बड़ी बात ही है। प्रभु की बनाई इस सृष्टि को देखकर कौन मनुष्य होगा? हाँ! मनुष्य होगा? जो आश्चर्य में न पड़ जाए। अचेतन से अचेतन परमाणु गतिमान है। आश्चर्य नहीं तो क्या है? और फिर चेतन का तो कहना ही क्या? इस अचेतन में चेतन की दृष्टि ही दर्शन है और यह अचेतन दर्शन ही चेतन दार्शनिकों का जनक है। अहो! कैसी विडम्बना है, चेतन दार्शनिक की गाथा अचेतन शब्दों में, और वो भी सकुचे हुये।

हमने सुना है कि नदरई नामक कस्बा जो कि जिला एटा (उत्तर प्रदेश) से कुछ मील की दूरी पर स्थित है, बड़ा मशहूर हुआ करता था। इस दार्शनिक का बचपन इसी कस्बे की गलियों और कूचों में बीता है। ये वो भूमि है जो इस दार्शनिक के लिये स्वर्ग से भी बढ़कर थी। ६ सितम्बर सन् १८८१ ई. को श्री कुञ्जबिहारीलाल और श्रीमती गोविन्दी देवी को यह दार्शनिक पुत्र रूप में प्राप्त हुआ। श्री कुञ्जबिहारीलाल जो कि कायस्थ थे, अधिक दिन अपने पुत्र का पालन न कर सके। महज २८ वर्ष की आयु में उनका देहान्त हो गया और पुत्र की पालना का समस्त भार माता की ममतामयी गोद पर आ गया। इसी ममतामयी व स्नेहमयी गोद में पला यह बालक आगे चलकर पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय नाम से प्रख्यात हुआ। कौन अभागा है जो इस नाम को नहीं जानता। ये तो वह लेखनी है जिसे आर्यजगत् में सर्वाधिक साहित्य लिखने का श्रेय प्राप्त है और न सिर्फ लिखने का बल्कि अत्यन्त पाण्डित्यपूर्ण लिखने का।

जैसा कि उल्लेख कर चुका हूँ कि अल्पायु में ही पिता का देहान्त हो गया था। बालक का बचपन किन कष्टों में बीता होगा, यह कल्पना सहज की जा सकती है। सिर नवाता हूँ माता गोविन्दी जी की तपस्या को जिन्होंने अपने पुत्र को कभी अभाव का अनुभव न होने दिया। क्या-क्या कष्ट झेले होंगे उन्होंने? लेखनी बता पाने में अक्षम है। कहते हैं कि जब उनके पास पैसा न होता था तो अपने बचे-खुचे जेवरों को गिरवी रख दिया करती थीं, उधार माँग लिया करती थीं और समय आने पर चुका दिया करती थीं। कभी-कभी जब समय अपनी धृष्टता दिखाता था तो वे बचे-खुचे भी बचे-खुचे न रहते थे, पर अपने लाल की शिक्षा-दीक्षा में कभी कमी न आने दी और लाल भी इतना होनहार कि अपनी माता के तप को व्यर्थ न जाने दिया। पण्डित जी अपनी आत्मकथा 'जीवन चक्र' में लिखते हैं- ''मुझे सन्तोष है कि जब ५८ वर्ष की आयु में मेरी माता ने शरीर छोड़ा तो मैं लगभग ४० वर्ष का था और वह मुझे बहुत कुछ अपने पैरों पर खड़ा हुआ देखने का आनन्द प्राप्त कर चुकीं थीं।''

पण्डित जी की प्रारम्भिक शिक्षा एटा में हुई। १४ वर्ष की अल्पायु में ही मिडिल की परीक्षा पास कर ली और प्रान्त भर में चौथा स्थान प्राप्त किया। उस समय हिन्दी, उर्दू, फ़ारसी का अच्छा ज्ञान हो गया था। उर्दू और गणित उनके रुचिकर विषय थे। इसके बाद १७ वर्ष की आयु में अपने ताऊ जी के पास अंग्रेजी पढ़ने बुलन्दशहर चले गये। इस समय तक वे अच्छे-खासे पौराणिक थे। एक दिन वे अचलेश्वर महादेव के दर्शन को जा रहे थे, तो कुछ पण्डे जो नये-नये आर्यसमाजी बने थे, उनकी हंसी उड़ाने लगे। बात कुछ तार्किक मालूम हुई, तो सच्चाई जानने के लिये सत्यार्थ प्रकाश मंगा लिया। फिर क्या था, धारा को उसका मार्ग मिल गया। सरिता सागर से जा टकराई। जीवन को नई दिशा मिल गयी। तत्पश्चात् अलीगढ़ वैदिक आश्रम में वैदिक विद्वान् बनने की लालसा खींच ले गयी। इन्हीं दिनों आपका विवाह श्रीमती कला देवी से हुआ।

इसी आश्रम में रहकर आर्य साहित्य का अध्ययन किया और लालसा पूरी हुई। गृहस्थ में प्रवेश हो ही चुका था और गरीबी भी कृपा बनाये हुए थी। लेखन में कोई विशेष रुचि नहीं थी मगर जब देखा कि कुछ पारिश्रमिक मिल सकता है तो एक पुस्तक लिखी जिसका नाम था 'नवीन हिन्दी व्याकरण'। यह पुस्तक १९०७ में इण्डियन प्रेस से छपी थी तथा इस पुस्तक का पारिश्रमिक १०० रु. के आसपास पण्डित जी को दिया गया। बस यहीं से इस लौह लेखनी का श्रीगणेश होता है। कलम की नोंक को इजाजत दे तो कुछ कहना चाहती है-

गरीबी तेरी इस अमीरी के सदके,
कि तूने जहाँ को ये क्या दे दिया?
बड़ी आरजू थी हमें गुल की जब,
कि तूने हमें गुलिस्तां दे दिया।।

१९०७ में शुरु हुआ यह सिलसिला पण्डित जी की अन्तिम सांस तक निरन्तर चलता रहा। अनेक ग्रन्थों का प्रणयन पण्डित जी की लेखनी से हुआ। उन पुस्तकों का अगर सिर्फ परिचय देने लग जायें तो शायद एक नये ग्रन्थ का निर्माण हो जाये और नये ग्रन्थकार का भी। फिर भी जो विवरण में हैं, उनका उल्लेख कर ही दूँ। हिन्दी व्याकरण का उल्लेख तो हो ही चुका है, यह लगभग १५० पृष्ठों में थी। उसके बाद बाल निबन्ध माला (१२५ पृष्ठ), हिन्दी शेक्सपियर ६ भागों में (१२०० पृष्ठ), जीव-जन्तु १४ भागों में (२१०० पृष्ठ), अंग्रेज जाति का इतिहास (४५० पृष्ठ), विधवा विवाह मीमांसा (३५० पृष्ठ), आर्यसमाज (२०० पृष्ठ), सर्वदर्शन संग्रह (१७५ पृष्ठ), आस्तिकवाद (४१४ पृष्ठ), अद्वैतवाद (४५२ पृष्ठ), वैदिक विवाह पद्धति (८० पृष्ठ), शंकर, रामानुज और दयानन्द (४८ पृष्ठ), वैदिक उपनयन पद्धति (३२ पृष्ठ), राजा राममोहन राय, केशवचन्द्र सेन और दयानन्द (१२२ पृष्ठ), धम्मपद (१६० पृष्ठ), जीवात्मा (४९८ पृष्ठ), मनुस्मृति भाष्य (६८० पृष्ठ), वैदिक मणिमाला (९० पृष्ठ), महिला व्यवहार चन्द्रिका (१७५ पृष्ठ), ईशोपनिषद् (१२८ पृष्ठ), शतपथ ब्राह्मण का अनुवाद (२५०० पृष्ठ), भगवत् कथा (१५६ पृष्ठ), हम क्या खावें घास या मांस (१८० पृष्ठ), शांकर भाष्यालोचन (३६० पृष्ठ), आर्य स्मृति (२०० पृष्ठ), कम्युनिज्म (२२० पृष्ठ), ऐतरेय ब्राह्मण भाष्य (५८ पृष्ठ), सनातन धर्म और आर्यसमाज (६० पृष्ठ), आर्योदय काव्यम्, पूर्वार्द्ध (२३६ पृष्ठ), उत्तरार्द्ध (२३४ पृष्ठ), आर्यसमाज की नीति (३२ पृष्ठ), मुक्ति पुनरावृत्ति (५० पृष्ठ), सरल संध्या विधि (८४ पृष्ठ), धर्म सुधासार (१४४ पृष्ठ), जीवन चक्र-आत्मकथा (५०० पृष्ठ), आदि तथा अंग्रेजी में Reason & Religion (156 pages), Swami Dayanand's Conribution to Hindu Solidarity (158 pages), I & My God (168 pages), Origin, Scope & Mission of Arya Samaj (184 pages), Worship (190 pages), Christianity in India (170 pages), Superstition (148 pages), Marriage & Married Life (212 pages), Agnihotra (32 pages), Light of Truth (860 pages), Landmarks of Swami Dayananda's Teachings (98 pages), Vedic Culture (300 pages), Life after Death (136 pages), A Catechism of the Elementary Teachings of Hinduism (68 pages), Arya Samaj a World Movement (16 pages), The Sage of Modern Times (20 pages), The Vedas, Yajans or Sacrifice, The world as We View It, Devas in the Vedas, Hindu! Wake Up! Dayananda & State, if I become a Christian, Outline of Dayanandian Philosophy, Philosophy of Dayanand आदि पुस्तकें लिखीं। स्मरण रहे कि यहाँ कुछ ही पुस्तकों का उल्लेख किया गया है। इसके अतिरिक्त भी पण्डित जी ने बहुत सी पुस्तकें लिखीं। उर्दू आदि में भी विस्तृत साहित्य लिखा। बहुत सी पुस्तकें ऐसी हैं जो बहुत बड़ी होने के कारण प्रकाशित भी न हो सकीं, यथा- मीमांसा भाष्य आदि। अब तो उनकी अनेक पुस्तकों के अनुवाद भी छप चुके हैं। बहुत सी पुस्तकें ऐसी हैं जिनकी मूल प्रतियाँ भी दीमकों का भोजन बन चुकी हैं। लेखन करने का ऐसा मानदण्ड आर्यजगत् में कोई और स्थापित न कर सका और अगर कोई है भी तो उनके ही ज्येष्ठ पुत्र स्वामी सत्यप्रकाश जी का नाम लिया जा सकता है। यह भी पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय जी की ही उपलब्धि कही जायेगी। पण्डित जी की पाँच सन्तानें थीं, जिनमें चार पुत्र और एक पुत्री थी। जिनके नाम क्रमशः डॉ. सत्यप्रकाश डी.एस-सी, श्री विश्वप्रकाश बी.ए., एल.एल.बी., प्रो. श्रीप्रकाश

एम.एस-सी, श्री रविप्रकाश एम.एस-सी, प्रो. सुदक्षिणा देवी एम.ए.-एल.टी. हैं। यहाँ विस्तार भय से इनकी अधिक चर्चा नहीं करेंगे। कभी अवसर हुआ तो स्वामी सत्यप्रकाश जी पर ज़रूर लिखेंगे।

लेखन के साथ-साथ पण्डित जी को शास्त्रार्थ में भी महारथ हासिल थी। उन्होंने बिजनौर में मुसलमानों से कई शास्त्रार्थ किये। बाराबंकी में पादरी ज्वालासिंह से शास्त्रार्थ किया, और भी कई शास्त्रार्थ के उल्लेख उनके जीवन में मिलते हैं। पण्डित जी उर्दू के अच्छे शायर भी थे। कुछ उर्दू काव्य भी उनके प्रकाशित हुये जैसे- कौसे कज़ा, मुसद्दस दयानन्द, मुसद्दस आहे बेज़ुबां आदि। पण्डित जी ने अपने जीवन काल में आर्यसमाज के प्रचारार्थ कुछ विदेश यात्राएँ भी कीं। दक्षिण अफ्रीका की यात्रा की। दक्षिण-पूर्व एशिया की यात्रा की। इन यात्राओं का विवरण पण्डित जी ने अपनी आत्मकथा में लिखा है।

पण्डित जी को आयु तो लम्बी मिली थी, पर अत्यधिक परिश्रम करने के कारण स्वास्थ्य बहुत अच्छा न रहा था। एक बार न्युमोनिया से पीड़ित हुये थे, तो उसका प्रभाव सारी उम्र फेफड़ों पर रहा। अपने जीवन काल में उन्हें दो बड़े ऑपरेशन भी कराने पड़े। आखों में मोतियाबिन्द तो अन्त समय तक रहा। एक आँख का ऑपरेशन भी कराया तो उसकी ज्योति ही चली गयी। वृद्धावस्था में कमजोरी तो हो ही गयी थी, इस पर भी एक दिन छत पर फिसल कर गिर गये तो कूल्हे की हड्डी भी टूट गयी। हृदय भी कमजोर पड़ गया था। इससे इतना तो स्पष्ट है कि उनका अन्तिम वर्ष बड़े कष्ट में बीता। पर उनका मस्तिष्क अन्तिम समय तक स्वस्थ रहा। इसलिये वे कष्ट में भी लेखन आदि करते रहे। एक महापण्डित के लिये इससे बड़ा वरदान कुछ और हो भी नहीं सकता। २९ अगस्त सन् १९६८ की बात है, प्रात:काल उनकी आवाज कुछ धीमी पड़ गयी। इस पथिक का भी बसेरा पूरा हो चुका था।

पूरे होशो-हवास में उन्होंने अन्तिम श्वास ली और निकल पड़े अपनी चिर यात्रा पर। आर्य जगत् धन्य हुआ आप जैसी प्रतिभा को पाकर। २९ अगस्त को देशभर में रेडियो के माध्यम से यह सूचना प्रसारित हुई कि महाविद्वान् पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय अब नहीं रहे।

ऐसी प्रतिभा से नई पीढ़ी को प्रेरणा लेनी चाहिये। उनके ग्रन्थ ही उनके प्रतिनिधि हैं। एक विस्तृत ज्ञान के भण्डार हैं। उनका प्रचार-प्रसार होना चाहिये। उनकी अलभ्य पुस्तकें खोजकर प्रकाशित होनी चाहिये। पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय जैसी प्रतिभा रोज़-रोज़ पैदा नहीं होती। पं. तिलोकचन्द 'महरूम' जी की पंक्ति याद आती है-

क्या-क्या हमें भी अपने नसीबों पे नाज है!
पाया जो हमने ज़माने पैम्बरी।

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को स्थान दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हों। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें। **-संपादक**

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एकमात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ– प्रवचन, वेद–पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***– आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***– अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्णरूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***– गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***– वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***– इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोधकर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***– योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों में भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी–छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(१६ से ३१ जुलाई २०१७ तक)

१. एस.के. शारदा चैरिटेबिल ट्रस्ट, अजमेर २. श्री देवमुनि, अजमेर ३. श्रीमती उर्मिला उपाध्याय, अजमेर ४. स्वस्तिकॉम चैरिटेबिल ट्रस्ट, अमरावती ५. श्री सुधीर कुमार गुप्ता, बिलासपुर ६. श्री सौमित्र कुमार गुप्ता, बिलासपुर ७. श्रीमती निर्मला देवी गुप्ता, बिलासपुर ८. श्रीमती सीमा गुप्ता, बिलासपुर ९. श्रीमती प्रेमलता गुप्ता, बिलासपुर १०. श्री मुकुन्द माधव गुप्ता, बिलासपुर ११. श्री विजय सिंह गहलोत व श्रीमती कंचन गहलोत, अजमेर १२. डॉ. नन्दकिशोर काबरा, अजमेर १३. श्री हरिभाई हरिओम, गुजरात १४. स्वामी देवेन्द्रानन्द, अजमेर १५. माता कौशल्या, अजमेर १६. माता शकुन्तला, बीकानेर १७. डॉ. ओमप्रकाश और डॉ. मोनिका हलिंगे, पुणे १८. श्री बलेश्वर मुनि, नई दिल्ली २०. सरला शारदा चैरिटेबिल ट्रस्ट, अजमेर।

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गो-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१६ से ३१ जुलाई २०१७ तक)

१. श्री विजय कुमार अग्रवाल, मुरादाबाद २. श्रीमती उर्मिला उपाध्याय, अजमेर ३. श्रीमती सुदेश गुलाटी, नई दिल्ली ४. श्री विनोद आर्य, भोपाल ५. श्री राहुल कुमार, हरिद्वार ६. श्री विजय सिंह गहलोत व श्रीमती कंचन गहलोत, अजमेर ७. मेहता माता जी, अजमेर ८. डॉ. नन्दकिशोर काबरा, अजमेर ९. श्री कैलाश शर्मा, अजमेर १०. श्रीमती कृष्णा देवी आर्या, रोहतक ११. श्री वीरेन्द्र कुमार बंसल, गिदड़बाहा १२. श्रीमती सुधा मेहरा, अजमेर १३. स्वामी देवेन्द्रानन्द, अजमेर १४. श्री रमेशचन्द, दिल्ली १५. श्री प्रवीण माथुर, अजमेर १६. श्री बाबू लाल, अजमेर १७. श्री मंगतुराम, अलवर १८. श्री सलमान, अजमेर १९. श्रीमती प्रेमलता शर्मा, अजमेर २०. श्री चन्ना राम, बालोतरा २१. श्री सुभाष भट्टड़, अजमेर २२. श्रीमती किरण भट्टड़, अजमेर २३. श्री अनन्त भट्टड़, अजमेर २४. श्रीमती निधि किरण भट्टड़, अजमेर २५. श्री त्रिजतन लाल, आजमगढ़ २६. श्री अनिरुद्ध, अजमेर २७. श्री लक्ष्मण मुनि, अजमेर २८. श्रीमती तरुणा गहलोत, अजमेर २९. श्री वेदान्त दयानन्द अनौने, हिंगोली।

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

जो विद्वान् लोग परोपकार बुद्धि से विद्या का विस्तार करने, सुगन्धि, पुष्टि, मधुरता रोगनाशक गुणयुक्त पदार्थों का यथायोग्य मेल अग्नि के बीच में उनका होम कर शुद्ध वायु, वर्षा का जल वा ओषधियों का सेवन करके शरीर को आरोग्य करते हैं वे इस संसार में अत्यन्त प्रशंसा के योग्य होते हैं।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५८

जैसे पवन सब को सुख देता हुआ सब के रहने का स्थान हो रहा है वैसे ही विद्वान् को होना चाहिये।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.४१

आचार्यः उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः

प्रो. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार

प्रिय पाठको, 'परोपकारी' के पिछले अंक में आपने गुरुकुल के विषय में प्रो. सत्यव्रत 'सिद्धान्तालंकार' और स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती के स्वप्नों को पढ़ा। प्रो. सत्यव्रत जी के स्वलिखित अभिनन्दन ग्रन्थ से उद्धृत वह लेख स्वयं में दीपस्तम्भ है, परन्तु उसी पुस्तक का एक और लेख आज की परिस्थितियों में इतना अधिक प्रासंगिक है कि उसे यहाँ प्रकाशित किये बिना रह पाना असम्भव हो गया। 'परोपकारी' पाक्षिक पत्र चाहता है कि इन विचारों से जनचेतना का प्रारम्भ हो ताकि मानव निर्माण के मूल 'शिक्षा-व्यवस्था' को पुनः परिशुद्ध रूप प्रदान किया जा सके। इसी आशा और विश्वास के साथ ये लेख चिन्तनार्थ सादर प्रस्तुत है। **-सम्पादक**

गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली को लेकर आमतौर पर भ्रम फैला हुआ है कि गुरुकुल काँगड़ी, हरिद्वार की संस्था ही गुरुकुल-शिक्षा-प्रणाली है। एक भ्रम यह भी है कि आर्यसमाज का ही सम्बन्ध गुरुकुल-शिक्षा-प्रणाली के साथ है या इस प्रणाली का उद्देश्य आर्यसमाज की विचारधारा का प्रचार करना है, या गुरुकुल-शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्र अगर आर्यसमाज का कार्य नहीं करते तो गुरुकुल-शिक्षा निरर्थक है। ये सभी बातें सारहीन हैं।

गुरुकुल-शिक्षा-प्रणाली एक स्वतन्त्र शिक्षा-प्रणाली है। जैसे मॉण्टेसरी सिस्टम, प्रोजेक्ट सिस्टम, बुनियादी तालीम या वर्धा-योजना, शिक्षा की एक-एक पद्धतियाँ हैं, वैसे ही गुरुकुल-शिक्षा-प्रणाली भी शिक्षा की एक पद्धति है। जैसे मॉण्टेसरी सिस्टम को मैडम मॉण्टेसरी ने चलाया, प्रोजेक्ट सिस्टम को जॉन ड्युई तथा उनके शिष्य किलपैट्रिक ने चलाया, बुनियादी तालीम को महात्मा गांधी ने चलाया, वैसे ही गुरुकुल-शिक्षा-प्रणाली का आर्यसमाज के साथ अविनाभाव का सम्बन्ध नहीं है। यह सहस्रों वर्षों से परम्परा के तौर पर भारत में चली आ रही शिक्षा प्रणाली है जिसके ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों में उल्लेख से संकेत पाकर महात्मा मुंशीराम ने गंगा-पार हरिद्वार में एक संस्था की स्थापना की और क्योंकि वे आर्य समाजी थे इसलिए उनकी काँगड़ी में स्थापित संस्था और उनके अनुकरण में जगह-जगह स्थापित शिक्षा-संस्थाएँ आर्यसमाज से जुड़ी प्रतीत होती हैं।

इस दृष्टि से विचार करें तो गुरुकुल-शिक्षा-प्रणाली एक व्यापक शब्द है व काँगड़ी, झज्जर, अयोध्या, कुरुक्षेत्र, इन्द्रप्रस्थ आदि संकुचित तथा एकदेशीय शब्द हैं। हो सकता है कि काँगड़ी, अयोध्या, कुरुक्षेत्र, सूपा आदि में गुरुकुल नाम की किसी शिक्षा-संस्था में गुरुकुल-शिक्षा-प्रणाली न हो, यह भी हो सकता है कि देहरादून, अमृतसर, दिल्ली या अन्यत्र कहीं एक स्कूल या कॉलेज हो, जो गुरुकुल न कहा जाता हो, परन्तु उसमें गुरुकुल-शिक्षा-प्रणाली चल रही हो। जब मैं कहता हूँ कि गुरुकुल -शिक्षा-प्रणाली शिक्षा की एक पद्धति है, जिसे सर्वप्रथम आर्यसमाज ने अपनाया, तब मेरा यह भी अभिप्राय है कि इस पद्धति को जैन, बौद्ध, ईसाई व मुसलमान-कोई भी अपना सकता है और यह भी संभव है कि जैन, बौद्ध, ईसाई व मुस्लिम गुरुकुल हों, नाम भले ही उनका गुरुकुल न हो और उन संस्थाओं का आर्यसमाज से दूर का भी संबन्ध न हो। जब यह समझ लिया जाएगा कि गुरुकुल-शिक्षा-प्रणाली एक पद्धति है, किसी संस्था-विशेष का नाम नहीं, तब अगर यह देखने में आए कि ईसाई और मुस्लिम गुरुकुल भी खुलने लगे हैं तो कोई आश्चर्य की बात न होगी।

अब विचारणीय रह जाते हैं गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति के मूलभूत सिद्धान्त। अगर गहरे में जायें तो स्पष्ट हो जाएगा कि 'गुरुकुल' शब्द में ही गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति के मूलभूत सिद्धान्त निहित हैं। 'गुरुकुल'-यह 'गुरु' तथा 'कुल' इन दो शब्दों से बना है। इनके अतिरिक्त इस प्रणाली में एक तीसरा शब्द है 'शिष्य'-वह व्यक्ति जिसके लिए इस शिक्षा-पद्धति का निर्माण हुआ है। इसमें एक चौथा शब्द है-'आश्रम'। इन शब्दों पर विचार करने से गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति के मूलभूत सिद्धान्त स्पष्ट हो जाते हैं।

१. गुरु- इस पद्धति का पहला शब्द है-'गुरु'। संस्कृत में एक प्रचलित शब्द है 'गुरुत्वाकर्षण'। इस शब्द का अर्थ है कि गुरु (भारी) वस्तु अपने से हल्की वस्तु को अपनी तरफ खींच लेती है। उदाहरणार्थ, सब वस्तुएँ बरबस पृथिवी की तरफ खिंच आती हैं। 'गुरु' का अर्थ है-वह व्यक्ति जो अपने गुणों से, अपनी विद्या से इतना भारी हो कि अल्प-ज्ञानवाले सब लोग उसकी तरफ खिंचे चले आयें। गुरु का यह सबसे बड़ा गुण है। आज हमारे गुरु विद्या या अपने गुणों से इतने भारी नहीं हैं कि विद्यार्थी उनकी तरफ खिंचे चले जायें। शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक गुरुत्ववाला ही गुरु कहलाने के योग्य बनता है। पर क्या हमारे गुरुओं में ऐसे गुण हैं कि छात्र उनकी तरफ खिंचे चले आयें? पढ़ाने वाले ही जब हड़ताल करें तब पढ़ने वाले उनसे क्या सीखेंगे? जब घड़ा भरा हो तभी उसमें से पानी पिया जाता है, खाली घड़े से किसकी प्यास मिट सकती है? आज हर छात्र को जो जीवन में कुछ बनना चाहता है, ट्यूशन लेनी पड़ती है। जितने स्कूल हैं उतने ही ट्यूशन-घर खुले हैं। ट्यूशन-घर क्या हैं, गुरुओं की विद्या बेचने की दुकानें। भारतीय संस्कृति के अनुसार जिन्हें ब्राह्मण कहा जाना चाहिए वे ब्राह्मण नहीं, बनिये बने हुए हैं। गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति का पहला मूल-सूत्र है कि विद्या का दान दिया जाता है, वह बेची नहीं जाती। भले ही आज के युग में यह कर सकना कठिन है, परन्तु विद्या देते हुए ऐसा दृष्टिकोण तो रखा ही जा सकता है। गुरु बनने के लिए पैसे का महत्त्व कम नहीं, परन्तु उसके लिए विद्या का अगाध सागर बनकर छात्रों की पिपासा को मिटाने के लिए उन्हें अपनी तरफ आकर्षित कर सकना अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है- यह गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति का पहला मूल-सिद्धान्त है।

२. कुल-इस पद्धति का दूसरा शब्द है-'कुल'। कुल का अर्थ है-'परिवार'। गुरुकुल उस शिक्षा-पद्धति को कहते हैं जिसमें गुरु तथा शिष्य इस भावना से एक-साथ रहते हैं मानों वे सब एक परिवार के अंग हों। बच्चा जन्म से ही माता-पिता के साथ रहता है। वह माता-पिता से, भाई-बहिनों से प्यार पाता है। गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति में शिक्षा पाने के लिए उसे माता-पिता, भाई-बहिन के छोटे तथा सीमित परिवार से अलग रखा जाता है, परन्तु गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति की भावना में वह एक छोटे परिवार से बड़े परिवार में जाता है, जहाँ गुरु उसके पिता तथा अन्य बच्चे उसके भाई होते हैं। शिक्षा-संस्था में 'कुल' की भावना गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति की ऐसी विशेषता है, जो अन्य शिक्षा-पद्धतियों में नहीं पायी जाती। वेदों में तो यहाँ तक कहा है कि आचार्य-कुल में बालक का प्रवेश, मौनो विद्यारूपी माता के गर्भ में प्रवेश पाना है, जहाँ उसका नया जन्म शुरु होता है। यह समझना कि गुरुकुल में प्रविष्ट होकर बालक माता-पिता से बिछुड़ जाता है, 'गुरुकुल' शब्द में निहित 'कुल' शब्द के अर्थ को न समझना है। इस शब्द की भावना है कि अन्ततोगत्वा सम्पूर्ण समाज, एक कुल, एक 'परिवार' बनाता है। माता-पिता का परिवार एक सीमित परिवार है, आचार्य-कुल एक बड़ा परिवार है, और ज्यों-ज्यों मनुष्य आगे-आगे बढ़ता है, त्यों-त्यों समाज, देश तथा विश्व-परिवार में अपने को विलीन कर देता है। सभी मानव-मानव की एकता की बात करते हैं, समाजवाद का नारा लगाते हैं, विश्व के सब नागरिकों के समान अधिकारों का आन्दोलन करते हैं, परन्तु जब तक ये भावनाएँ क्रियात्मक रूप में प्रारम्भिक शिक्षा तथा रहन-सहन द्वारा हमारे जीवन में ओत-प्रोत नहीं हो जातीं, तब तक ये नारेबाजी ही रह जाती हैं। अगर इस नारे को क्रियात्मक रूप देना हो, तो भाई-भाईपने का क्रियात्मक अनुभव जो मनुष्य जन्मते ही अपने परिवार में पाता है, उसे क्रियात्मक रूप से आगे बढ़ाना होगा ताकि एकात्मता की भावना परिवार में, कुल में शुरु हो, आचार्य-कुल में आगे बढ़े, और बढ़कर समाज, देश तथा विश्व में जा पहुँचे। इसी को वेद में कहा है-'समानो मन्त्रः समितिः समानी'। गुरुकुल का 'कुल' शब्द प्रत्येक मानव को, विश्व को एक ही स्तर का नागरिक बनाने में एक कड़ी है। माता-पिता के कुल से आचार्य के, आचार्य के कुल से समाज के, समाज के कुल से देश, और देश के कुल से विश्व के कुल में आगे-आगे बढ़ते जाना-'गुरुकुल में कुल' शब्द का यही अर्थ है।

३. शिष्य-गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति का तीसरा शब्द है- 'शिष्य'। शिष्य शब्द 'शास् अनुशासने' धातु से बना

है। अनुशासन के लिए अंग्रेजी में शब्द है-डिसिप्लिन। शिष्य का मूल कर्त्तव्य है अनुशासन में, डिसिप्लिन में रहना। आज कोई भी अनुशासन में रहने को तैयार नहीं। अनुशासन जीवन के किसी भी क्षेत्र में नहीं है। स्कूलों-कॉलेजों-यूनिवर्सिटियों में अपने अधिकारों के लिए विद्यार्थियों की, अध्यापकों की, प्रोफेसरों की, डॉक्टरों की यूनियनें हैं। हर क्षेत्र में यूनियनें हैं, मानों छात्रों का काम यूनियन बनाकर आन्दोलन करना है। छात्र,पेपर आउट हो जाय या नकल करके बिना पढ़े पास होना चाहते हैं, क्योंकि पढ़ने के लिए अनुशासन में बँधना होगा, जिसमें रहने के लिए कोई तैयार नहीं। गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति का मूल-सिद्धान्त ही अनुशासनप्रियता है, इसीलिए विद्यार्थी को 'शिष्य' संज्ञा दी गयी। जो विद्यार्थी-जीवन में अनुशासन न सीखें, वे समाज का अंग बनने पर कैसे अनुशासन में रह सकते हैं?

४. **आश्रम**-विद्यार्थी को गुरुकुलाश्रम में रहना होता है, इसलिए इस **पद्धति का चौथा शब्द है-'आश्रम'।** वैदिक संस्कृति में मानव-जीवन चार आश्रमों में बँटा है-ब्रह्मचर्याश्रम, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थाश्रम तथा संन्यासाश्रम। विद्यार्थी का जीवन सबसे पहले ''ब्रह्मचर्याश्रम'' से प्रारम्भ होता है। वैसे तो जीवन के ये पड़ाव होते ही हैं, वैदिक संस्कृति ने इन्हें वैज्ञानिक रूप देने के लिए इन्हें चार आश्रमों में बाँट दिया है। बालक पहले पढ़ता-लिखता है, फिर जीवन संग्राम में उतर जाता है, आजीविका के लिए कोई धन्धा करता है, फिर इस कशमकश से थक जाता है, आराम करता है जिसे हम रिटायर होना कहते हैं, अन्त में सब तरफ से उपराम हो जाता है। जीवन के अवश्यंभावी इन चार पड़ावों की आश्रम-व्यवस्था में पहला पड़ाव, पहला आश्रम ब्रह्मचर्याश्रम है जिसका आज लोग उपहास करते हैं। परन्तु, जिन्होंने जीना सीखा है वे जानते हैं कि असली स्वस्थ जीवन ब्रह्मचर्य का जीवन ही है। गुरुकुल-पद्धति का कहना तो यह है कि ब्रह्मचर्य से और तप का जीवन बिताने से मृत्यु पर विजय पाई जा सकती है-**ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत।**

ब्रह्मचर्य और तप का जीवन माता-पिता के साथ गृहस्थ में रहने से नहीं बल्कि आश्रम में रहकर ही बिताया जा सकता है। अंग्रेजी में आश्रम को बोर्डिंग-हाउस कह सकते हैं, पर बोर्डिंग हाउस तथा गुरुकुल की आश्रम-व्यवस्था में भेद यह है कि बोर्डिंग हाउस में छात्र जो-कुछ खाना चाहें खा सकते हैं। मांस तथा मसालों में किसी प्रकार का नियन्त्रण नहीं। अमीर अमीरी खाना खाये, गरीब गरीबी खाना। इसके अतिरिक्त विद्यार्थियों तथा गुरुओं का एक ही बोर्डिंग हाउस में खाना आवश्यक नहीं। गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति में जहाँ खाने में सात्विकता आवश्यक है, वहाँ कुल की भावना होने के कारण गुरु-शिष्य का एक-साथ भोजन करना और भी आवश्यक है, अन्यथा गुरु-शिष्य का एक-साथ बोलना-''**सह नौ अवतु सह नौ भुनक्तु**''-यह सब निरर्थक हो जाता है।

आश्रम-व्यवस्था में सब ब्रह्मचारियों के एक-साथ रहने के दो मुख्य लाभ हैं। पहला लाभ यह है कि सबकी दिनचर्या समान-सूत्र में बँध जाती है। सब समय पर सोते-जागते, स्नान-सन्ध्या-उपासना-व्यायाम आदि करते हैं। आवश्यक दिनचर्या में से किसी आइटम को छोड़ते भी नहीं। गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति की यह देन जीवन को नियन्त्रित रखने में बहुत सहायक है। आश्रम-व्यवस्था का दूसरा लाभ यह है कि एक-साथ रहने से ऊँच-नीच का भाव नहीं रहता, सब समान रहते हैं, भाई-भाई की तरह। सार्वजनिक जीवन के लिए यह भावना अत्यन्त आवश्यक है। आज हमारा समाज जात-पाँत में बँटा है। कोई ऊँचा है कोई नीची जात का। हम चुनाव भी इसी के आधार पर लड़ते हैं। निम्न कही जाने वाली जातियों के उद्धार के लिए माइनॉरिटी कमीशन और पार्लियामेण्ट-अधिनियम बने हुए हैं। जिनसे ऊँच-नीच का भेद मिटाने के स्थान में दृढ़ होता जा रहा है। जब निम्न जाति का होने के कारण कुछ अधिकार विशेष मिलने लगे तब जाति-भेद कैसे मिट सकता है? जातिगत भेद-भाव को मिटाने के लिए शिक्षा-पद्धति में आश्रम-व्यवस्था को लाना अत्यावश्यक है।

शेष भाग अगले अंक में.....

मनुष्यों को चाहिये कि सदा यज्ञ का आरम्भ और समाप्ति को करें और संसार के जीव को अत्यन्त सुख पहुँचावें। **-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६२**

शङ्का समाधान – ७

डॉ. वेदपाल, मेरठ

शङ्का–१. श्री मनु महाराज ने धर्म के दस लक्षणों में महत्त्वपूर्ण 'अहिंसा' को शामिल नहीं किया है। जबकि महर्षि दयानन्द अहिंसा को ग्यारहवां धर्म-लक्षण मानते हैं। अन्य जैन, बौद्ध धर्मानुयायी अहिंसा को बहुत महत्त्व देते हैं।

एक और बात, हमारे शास्त्रों में वनस्पतियों में प्राण होते हैं, ऐसा माना गया है। वनस्पति-शास्त्र विशेषज्ञ डॉ. बोस ने वनस्पतियों में प्राणशक्ति-ज्ञान तथा स्मृति भी होती है, ऐसा उन्होंने अपने परीक्षण में सिद्ध किया है। क्या वनस्पति-अन्न के बिना जीवित रह सकते हैं? फिर अहिंसा का क्या महत्त्व? हाँ, उपयोगी पशु-पक्षियों का वध नहीं करना चाहिए।

२. महर्षि दयानन्द ने लिखा है कि कर्मों का फल भुगतना ही पड़ता है, पापकर्मों को ईश्वर कभी क्षमा नहीं करता। फिर ईश्वर की प्रार्थना करने का क्या अर्थ?

–डॉ. एस.एल. वसन्त, फाजिल्का (पंजाब)

समाधान–१. आपकी प्रथम शङ्का के दो भाग हैं- (१) महर्षि द्वारा अहिंसा को ग्यारहवां धर्म-लक्षण मानना, (२) वृक्ष वनस्पति तथा उनसे उत्पन्न पदार्थ सेवन पर हिंसा की प्रतीति।

महर्षि द्वारा अहिंसा को ग्यारहवां धर्म लक्षण मानने से मनुप्रोक्त धर्म के दश लक्षण- धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शुचिता (शौच) इन्द्रिय-निग्रह (संयमित जीवन), धी (बुद्धि), विद्या, सत्य, अक्रोध का किसी भी प्रकार से अपलाप नहीं होता है। विचार करने पर यह भी स्पष्ट होता है कि क्षमा एवं अक्रोध इन दो लक्षणों में अहिंसा का अन्तर्भाव हो जाता है। स्यात् इन क्षमा एवं अक्रोध में ही अहिंसा को अन्तर्भूत मानकर मनु ने पृथकशः अहिंसा का उल्लेख न किया हो। महर्षि ने विस्तारपूर्वक व्याख्या करते हुए इसका पृथक् उल्लेख पत्र-व्यवहार में किया है। दोनों के मन्तव्य में कोई विरोध नहीं है।

जैन एवं बौद्ध यद्यपि अहिंसा को महत्त्व देते हैं। इनमें जैन तो आचरण की दृष्टि से अहिंसक हैं, किन्तु बौद्ध प्रायः मांसाहारी हैं, जिसकी उपलब्धि के लिए हिंसा अपरिहार्य है। स्वयं महात्मा बुद्ध ने चुन्द कर्मार के यहाँ अन्तिम भोजन मार्दव शूकर का किया था।

आपकी शङ्का का दूसरा भाग है–वृक्ष-वनस्पति से जीवन-यापन अथवा उनका भक्षण करने पर अहिंसा का क्या अर्थ (अर्थात् प्रयोजन) है? अर्थात् अहिंसा का कोई मूल्य नहीं है। आपका यह मन्तव्य अग्रिम वाक्य-''हाँ, उपयोगी पशु-पक्षियों का वध नहीं करना चाहिए'' से स्पष्ट है। यहाँ अर्थापत्ति से प्रतीयमान अर्थ भी अहिंसा का प्रतिपादक नहीं है।

आपके वाक्य से प्रतीत होता है कि वनस्पति-जन्य पदार्थों फल, अन्नादि के सेवन में भी हिंसा होती है। मनुष्य के भोजन के सम्बन्ध में वेद का आदेश है-

१. अजीजन ओषधीर्भोजनायकम्। -ऋक् ५.८३.१०

२. पयः पशूनां रसमोषधीनां बृहस्पतिः सविता मे नियच्छात्। -अथर्व १९.३१.५

३. व्रीहिमत्तं यवमत्तमथो माषमथो तिलम्।
एष वां भागो निहितो रत्नधेयाय दन्तौ मा हिंसिष्टं पितरं मातरञ्च।। -अथर्व ६.१४०.२

४. अन्नपते अन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः।
-यजु. ११.८३

अतः वृक्ष-वनस्पति से प्राप्त पदार्थ मनुष्य द्वारा भक्ष्य हैं। क्या इन वृक्ष-औषधी आदि के काटने पर हिंसा होती है? यह विचारणीय है। हिंसा का अभिप्राय है कष्ट पहुंचाना, दुःख पहुँचाना। दुःख एवं सुख की अनुभूति किससे होती है? कहना होगा कि इसके साधन या माध्यम हैं-इन्द्रियां। किन्तु यह भी तब जब इनका सम्बन्ध एक ओर तो विषय-अर्थ के साथ हो और दूसरी ओर मन के साथ। मन का सम्बन्ध आत्मा के साथ होने पर ही दुःख-सुख की अनुभूति किसी भी जीव को होती है। सांख्य का मत है-

पञ्चावयवसंयोगात्सुखसंवित्तिः। -सां.द. ५.२७

इसलिए इनकी अवस्था सुषुप्ति कही गयी है। इस सन्दर्भ में महर्षि दयानन्द का अभिमत है-''वैसे वायुकाय

अथवा अन्य स्थावर शरीर वाले जीवों को सुख वा दु:ख कभी प्राप्त नहीं हो सकता, जैसे मूर्छित प्राणी सुख-दु:ख को प्राप्त नहीं हो सकता वैसे वे वायुकायादि के जीव भी अत्यन्त मूर्छित होने से सुख-दु:ख को प्राप्त नहीं हो सकते,''-स.प्र. समुल्लास १२

यहाँ केवल बाह्य इन्द्रियों द्वारा होने वाले सुख-दु:ख के अभाव का सादृश्य है। सर्वांश में मनुष्य की सुषुप्ति के साथ वृक्षों की अवस्था की समानता नहीं है।

२. जीव के गुणों में महत्त्वपूर्ण हैं-ज्ञान एवं प्रयत्न। शरीर, इन्द्रिय और अन्त:करणादि जीव के अधीन हैं। अपने सामर्थ्यानुकूल कर्म करने में वह स्वतन्त्र है। अपने किए कर्मों का फल ईश्वरीय व्यवस्था से जीव भोगता है। इसलिए उसे कर्त्ता एवं भोक्ता कहा जाता है। अपने इसी कर्म-स्वातन्त्र्य के कारण वह शुभ एवं अशुभ (पुण्य एवं पाप) करता है। तदनुसार ही फल प्राप्त करता है। जिस प्रकार अच्छे कर्मों का फल प्राप्त करता है, उसकी प्रकार पाप कर्मों का फल भी प्राप्त करता है। इन पाप कर्मों को ईश्वर क्षमा नहीं करता है। पुन: प्रार्थना का अर्थ है-''स्तुति से ईश्वर में प्रीति, उसके गुण, कर्म, स्वभाव से अपने गुण, कर्म, स्वभाव का सुधारना, प्रार्थना से निरभिमानता, उत्साह और सहाय का मिलना, उपासना से परब्रह्म से मेल और उसका साक्षात्कार होना।''-स.प्र. समु. ७

अत: प्रार्थना का प्रयोजन दोष छूटकर, गुणकर्म स्वभाव का पवित्र होना है।

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि-यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/ वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

आचार्य धर्मवीर जी की स्मृति में स्थिर-निधि

ऋषि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा की तन, मन, धन से सेवा करने वाले, उसे अपनी मातृवत् समझने वाले और यहाँ तक कि अपना जीवन समर्पित कर देने वाले डॉ. धर्मवीर आज अपना समस्त भार आर्य जनता अर्थात् अपने उत्तराधिकारियों पर छोड़ गये हैं। उन्होंने ऋषि के स्वप्नों को अपना कर्त्तव्य समझकर सभा को गगनचुंबी ऊँचाइयों तक पहुँचाया। अनेक नये प्रकल्प चलाये यथा-वैदिक गुरुकुल, गौशाला, आश्रम, अतिथियों के ठहरने व खान-पान की नि:शुल्क व्यवस्था आदि। उन्होंने जो-जो कार्य छेड़े उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति में कभी न्यूनता न आने दी। परोपकारिणी सभा ऐसे पुत्र को प्राप्त कर गौरव का अनुभव करती है और बिछुड़कर शोकग्रस्त होने का भी। उनके द्वारा शुरु किये कार्य कभी शिथिल न पड़ें, इस कारण **सभा ने डॉ. धर्मवीर जी की स्मृति में एक करोड़ रु. की स्थिर निधि बनाने का संकल्प लिया है,** जिससे कि धन धर्म के काम आ सके। इसमें सन्देह नहीं कि ये समस्त कार्य आर्य जनता के सहयोग से ही प्रारम्भ हो सके हैं और सहयोग से ही चल भी रहे हैं। इसलिये इसमें भी सन्देह नहीं कि सभा के इस संकल्प को आर्य जनता शीघ्र पूर्णता की ओर पहुँचा देगी और शायद उससे भी कहीं बढकर। यज्ञ तो हवि माँगता है। बिना हवि के यज्ञ की कल्पना भी क्या? बस देरी तो सूचित होने की है। हवि बनना तो आर्यों के खून में है, तन से, मन से अथवा धन से।

आप अपना दान चैक, ड्राफ्ट या सभा के खाते में सीधे भी भेज सकते हैं। कृपया, राशि भेजने के पश्चात् सभा में दूरभाष या पत्र द्वारा अवश्य सूचित कर दें।

मन्त्री

संस्था - समाचार

राज्यपाल से भेंट- परोपकारिणी सभा के यशस्वी प्रधान आचार्य धर्मवीर जी के सत्प्रयासों से पिछले वर्ष राजस्थान के राज्यपाल श्री कल्याण सिंह के द्वारा महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, अजमेर में 'दयानन्द पीठ' स्थापित करने की घोषणा हुई थी, किन्तु अभी तक कार्य आरम्भ नहीं हुआ था। इसी प्रसंग में बृहस्पतिवार २७ जुलाई २०१७ को परोपकारिणी सभा के मंत्री श्री ओममुनि के नेतृत्व में सभा के अधिकारियों और सदस्यों का एक प्रतिनिधि मंडल राज्यपाल से मिलने जयपुर गया। इसमें राजस्थान के लोकायुक्त श्री सज्जन सिंह कोठारी जयपुर से तथा सभा के उपप्रधान-श्री रामगोपाल गर्ग, संयुक्त मंत्री-श्री दिनेश शर्मा, कोषाध्यक्ष-श्री सुभाष नवाल, सभासद्-श्रीमती ज्योत्स्ना 'धर्मवीर', आर्य समाज अजमेर के मन्त्री श्री चन्दराम आर्य अजमेर से सम्मिलित हुए। इस अवसर पर राज्यपाल महामहिम श्री कल्याण सिंह जी को महर्षि दयानन्द कृत वेदभाष्य, सत्यार्थ प्रकाश सहित ऋषि दयानन्द का समग्र साहित्य एवं अन्य वैदिक साहित्य भेंट किया। इस भेंट का प्रभाव यह हुआ कि उसके चार दिन बाद ही महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय का दीक्षान्त समारोह था। इस अवसर पर मान्य राज्यपाल भी पधारे और उन्होंने विश्वविद्यालय में दयानन्द पीठ के लिये १ करोड़ की राशि की घोषणा की। समस्त आर्य जगत् व परोपकारिणी सभा के लिये यह अति हर्ष का विषय है। आर्य जगत् मान्य राज्यपाल जी का धन्यवाद ज्ञापित करता है।

परोपकारिणी सभा के मन्त्री द्वारा वैदिक प्रचार यात्रा का आयोजन-परोपकारिणी सभा अपने सम्पूर्ण सामर्थ्य से वैदिक धर्म का प्रचार 'गुरुकुल' आदि अनेक प्रकल्पों से कर रही है, पर इससे भी आगे जाकर आर्य समाज के सांगठनिक ढाँचे को मजबूत करने व वैदिक धर्म का प्रचार-प्रसार सम्पूर्ण भारतवर्ष में करने के उद्देश्य से प्रतिवर्ष प्रचार यात्रा का आयोजन भी करती है। पिछले वर्षों में पंजाब व गुजरात आदि अनेक क्षेत्रों की यात्रा प्रभावकारी रहीं। इसी यात्रा के चलते पंजाब के पुस्तकालयों से कुछ दुर्लभ दस्तावेज भी प्राप्त हुये। इन यात्राओं की सार्थकता को देखते हुए इस वर्ष यह यात्रा दक्षिण भारत के हैदराबाद व बैंगलूरु आदि स्थानों पर आयोजित की गई है। हैदराबाद का सत्याग्रह आर्य समाज के लिये गौरवमय इतिहास है। वहाँ के पुस्तकालयों के बहुमूल्य दस्तावेज इस यात्रा का अंग हो सकते हैं। इस कार्य के लिये आर्यसमाज के इतिहासज्ञ विद्वान्, बहुभाषावित् प्रो. राजेन्द्र जिज्ञासु मार्गदर्शक के रूप में रहेंगे।

हैदराबाद एवं बैगुलूरु के समस्त आर्यजनों से निवेदन है इस प्रचार यज्ञ में अपना सहयोग देने का अवसर ना चूकें। क्षेत्रीय कार्यकर्त्ताओं का सहयोग अत्यन्त अपेक्षित है। आपका सहयोग इस कार्य की सफलता को और अधिक बढ़ा सकता है।

यात्रा-विवरण-१२ अगस्त रात्रि ९ बजे अजमेर से इन्दौर के लिए प्रस्थान करेंगे। १३ अगस्त प्रात: १०.२० बजे इन्दौर पहुँचेंगे। १३ अगस्त को ही रात्रि ०९.०५ बजे इन्दौर से हैदराबाद चलेंगे। १४ अगस्त रात्रि १०.२० बजे हैदराबाद पहुँचेंगे, वहाँ पर तीन दिन रुकेंगे। १७ अगस्त शाम ०७.०५ बजे हैदराबाद से बैगलूरु चलेंगे। १८ अगस्त प्रात: ०६.२५ बजे बैंगलूरु पहुँचेंगे। बैंगलुरु चार दिन रुकेंगे। २२ अगस्त रात ०९.५० बजे बैंगलूरु से अजमेर के लिए चलेंगे। २४ अगस्त शाम ०५. ४० बजे अजमेर पहुँचेंगे। इस यात्रा में मुख्य रूप से परोपकारिणी सभा के वरिष्ठ सदस्य श्री राजेन्द्र जिज्ञासु, के अतिरिक्त मन्त्री श्री ओममुनि, आचार्य इन्द्रजित् देव, श्री रमेश मुनि, श्री देवमुनि एवं अन्य आर्यजन शामिल होंगे।

आर्यवीरों एवं वीरांगनाओं को पुरस्कार- १६ जुलाई २०१७ को सेंट मेरी कान्वेन्ट स्कूल, अलवर गेट, अजमेर में जिला स्तरीय इंटर क्लब कराटे चैम्पियनशिप का आयोजन किया गया, जिसमें आर्यवीरों एवं वीरांगनाओं नें भी हिस्सा लिया। विजेताओं को ऋषि उद्यान में रविवार २३ जुलाई को प्रात:काल सभा मंत्री श्री ओममुनि, श्रीमती ज्योत्स्ना 'धर्मवीर' एवं स्वामी मुक्तानन्द द्वारा पुरस्कार दिये गये। कु. हिमांशी साहू को प्रथम स्थान के लिए स्वर्ण पदक प्राप्त हुआ। श्री रिषभ, कु. विमल साहू तथा कु. कोमल

साहू को द्वितीय स्थान के लिए रजत पदक प्राप्त हुए। श्री प्रकाश साहू एवं हर्षवर्धन को तृतीय स्थान के लिए कांस्य पदक प्राप्त हुए। इस अवसर पर आर्यवीर दल अजमेर के जिला संचालक श्री विश्वास पारीक एवं जिला मंत्री श्री सुशील शर्मा उपस्थित रहे।

विद्यालय की छात्राओं का आगमन- १८ जुलाई को मेयो गर्ल्स स्कूल की ग्यारहवीं कक्षा की इतिहास विषय की छात्रायें महर्षि दयानन्द सम्बन्धी जानकारी लेने हेतु ऋषि उद्यान आयीं। उनकी अध्यापिकाएं श्रीमती भवप्रीता एवं नीना जी साथ रहीं। सभी छात्राओं और अध्यापिकाओं ने सरस्वती भवन में दयानन्द चित्र दीर्घा एवं वस्तु प्रदर्शनी देखी। छात्राओं व अध्यापिकाओं ने सायंकालीन यज्ञ में सम्मिलित होकर आहुतियां भी प्रदान कीं। यज्ञोपरान्त प्रवचन में **उपाचार्य सत्येन्द्र** ने छात्राओं को ऋषि दयानन्द के जीवन व उनके कार्यों की जानकारी दी। व्याख्यान की समाप्ति पर उपाचार्य जी ने २७,२८,२९ अक्टूबर २०१७ को आयोजित ऋषि मेला की सूचना देते हुए सभी छात्राओं एवं अध्यापिकाओं को आमन्त्रित किया।

विशिष्ट व्यक्तित्व- २० जुलाई को परोपकारिणी सभा के भूतपूर्व मन्त्री **स्व. श्रीकरण शारदा** एवं उनकी बहन सुश्री सरला शारदा की पुण्यतिथि पर उनके सुपुत्र श्री हेमन्त शारदा ने अपनी पत्नी के साथ यज्ञ किया। श्रीकरण शारदा लगभग २० वर्षों तक परोपकारिणी सभा के मन्त्री पद पर रहते हुए सभा को सेवायें देते रहे।

अतिथि- ३१ जुलाई को हॉलैण्ड से आचार्य दिनेश कुमार अपने परिवार के साथ ऋषि उद्यान आये। आचार्य दिनेश कुमार श्रीमद्दयानन्द आर्ष विद्यालय, गौतमनगर-दिल्ली के स्नातक हैं एवं वर्तमान में हॉलैण्ड सरकार द्वारा अपराधियों को धार्मिक शिक्षा देने के लिये धर्म शिक्षक नियुक्त हैं। बचपन से ही वे आचार्य धर्मवीर जी को अपना आदर्श मानते रहे हैं। आचार्य जी के निधन के उपरान्त श्रीमती ज्योत्स्ना 'धर्मवीर' से मिलने के लिये वे ऋषि उद्यान आये।

गुरुकुल में पठन-पाठन-परोपकारिणी सभा द्वारा ऋषि उद्यान में संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल में इस समय ५ आचार्य हैं। विभिन्न प्रान्तों से आये हुए १५ वर्ष से ४५ वर्ष की आयु के कुल ३८ ब्रह्मचारी अध्ययनरत हैं। जिनमें से ६ ब्रह्मचारी व्यवहारभानु, २ ब्रह्मचारी प्रारम्भिक रचना अनुवाद कौमुदी, ४ ब्रह्मचारी रचना अनुवाद कौमुदी का द्वितीय भाग, ७ ब्रह्मचारी प्रथमावृत्ति, ४ ब्रह्मचारी पिङ्गल छन्द शास्त्र, १२ ब्रह्मचारी मीमांसा दर्शन, १८ ब्रह्मचारी न्याय दर्शन पढ़ रहे हैं। सभी ब्रह्मचारियों के भोजन, आवास तथा अन्य आवश्यक साधनों की व्यवस्था **परोपकारिणी सभा की ओर से निःशुल्क है।** महर्षि के आदेशानुसार देश-देशान्तर में वेद प्रचार के लिए विद्वान् तैयार किये जा रहे हैं। सभी ब्रह्मचारियों को पठन-पाठन के साथ ही व्याख्यान प्रशिक्षण भी दिया जाता है। वे सब समाज, राष्ट्र की सेवा का व्रत लेकर अध्ययन कर रहे हैं।

अतिथि- महर्षि दयानन्द चित्र दीर्घा एवं वस्तु प्रदर्शनी देखने, विद्वानों-संन्यासियों से मिलने, यज्ञ-प्रवचन का लाभ लेने, भ्रमण तथा प्रचार हेतु ब्रह्मचारी, संन्यासी, वानप्रस्थी, विद्वान्, गृहस्थ स्त्री-पुरुष-बच्चे आते ही रहते हैं। पिछले पन्द्रह दिनों में निम्बाहेड़ा, पुष्कर, थांवला, जयपुर, अहमदाबाद, रोहतक, रुद्रपुर, भिण्ड, मालपुरा, बिजनौर, बादली, भीलवाड़ा, कोटा, सीकर, जोधपुर, माऊण्ट आबू, बीकानेर, दिल्ली, जालंधर, उदयपुर, चापानेरी, चित्तौड़गढ़, फुलेरा, भिवानी, हिसार आदि स्थानों से कुल ७१ अतिथि ऋषि उद्यान आये।

विवाह वर्षगाँठ, पुण्यतिथि- ऋषि उद्यान की यज्ञशाला में २७ जुलाई को संस्कृत विद्वान् **श्री बद्रीप्रसाद पंचोली** ने अपने ८२ वें जन्मदिवस के अवसर पर यज्ञ किया। वे परोपकारिणी सभा से बहुत समय से जुड़े हुए हैं तथा प्रतिवर्ष अपना जन्मदिन ऋषि उद्यान में ही मनाते हैं। उन्होंने अपने परिवार के लगभग सभी सदस्यों को अतिथि-यज्ञ के होता रूप में सभा से जोड़ा है। इस अवसर पर सभा मन्त्री श्री ओममुनि उपस्थित रहे। १७ जुलाई को स्व. नारायण सिंह राजगुरु की पुण्यतिथि पर उनकी पत्नी श्री प्रतिभा राजगुरु एवं पुत्र श्री अजय राजगुरु ने यज्ञ किया। सभी यजमानों को संन्यासियों, विद्वानों तथा सभी वृद्धजनों ने आशीर्वाद प्रदान किया। परोपकारिणी सभा परिवार की ओर से सब यजमानों की दीर्घ आयु की प्रार्थना करते हुए हार्दिक शुभकामनाएँ।

गुरुकुलवासियों का पर्वतारोहण- राजस्थान की

शेष भाग पृष्ठ संख्या ९ पर.....

आर्यजगत् के समाचार

१. **योग दिवस मनाया**- दि. २१ जून २०१७ को अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस आर्यसमाज नई मण्डी, मुजफ्फरनगर में समारोहपूर्वक मनाया गया। कार्यक्रम का शुभारम्भ विश्व कल्याण की कामना के साथ वेदमन्त्रों से देवयज्ञ के साथ किया गया। यज्ञ के यज्ञमान श्री अमोदकुमार आर्य सपत्नीक रहे।

२. **सम्मान समारोह**- दिल्ली संस्कृत अकादमी, दिल्ली सरकार द्वारा 'संस्कृत साहित्य सेवा सम्मान समारोह' के अन्तर्गत गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के पूर्व आचार्य एवं उपकुलपति तथा वेद एवं संस्कृत के सुविख्यात विद्वान् प्रो. वेदप्रकाश शास्त्री को 'संस्कृत साहित्य के क्षेत्र में उत्कृष्ट सेवा' हेतु दिल्ली सरकार के मुख्यमंत्री के द्वारा वर्ष २०१५-१६ का 'महर्षि वेदव्यास सम्मान' से सम्मानित किया गया। यह कार्यक्रम दिल्ली सचिवालय ऑडिटोरियम में हुआ।

३. **योग दिवस मनाया**- अन्तर्राष्ट्रीय विश्व योग दिवस २१ जून २०१७ के दिन आर्यसमाज यमलार्जुनपुर में योग शिविर कार्यक्रम आयोजित किया, जिसमें बृहत यज्ञ योगासन, दण्ड-बैठक, प्राणायाम का प्रदर्शन किया गया।

४. **वेद प्रचार**- वेद प्रचार मण्डल आर्यावर्त फर्रूखाबाद उ.प्र. के तत्त्वावधान में प्रदेश के कई जनपदों में दिनांक १५ मई २०१७ से २४ जून २०१७ (४१ दिवसीय) तक शहरी एवं ग्रामीण अंचलों में उपदेशक तथा भजनोपदेशकों द्वारा वैदिक धर्म का प्रचार-प्रसार किया गया। गत वर्षों की भांति इस वर्ष भी वेद प्रचार मण्डल आर्यावर्त के तत्त्वावधान में भव्य गुरु-पूर्णिमा महोत्सव का आयोजन दिनांक ०९ जुलाई २०१७ को आर्य समाज कमालगंज, फर्रूखाबाद में किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता वेद प्रचार मण्डल के अध्यक्ष श्रद्धेय चन्द्रदेव शास्त्री ने की।

५. **वेद प्रचार**- आर्य उपप्रतिनिधि सभा भीलवाड़ा (राज.) द्वारा आर्यसमाज फूलिया कलाँ के तत्वावधान में दिनांक १३,१४,१५ जुलाई को ग्राम फूलिया कलाँ में एवं निकटवर्ती विद्यालयों आदि में वेदप्रचार कार्यक्रम रखा गया। इस कार्यक्रम में पं. कुँवर भूपेन्द्र सिंह व पं. लेखराम शर्मा द्वारा मधुर संगीत के माध्यम से भजनोपदेश हुए।

६. **अध्यापकों की आवश्यकता**- श्रीमद्दयानन्द आर्ष गुरुकुल खेड़ा खुर्द दिल्ली-८२ में अंग्रेजी, गणित और विज्ञान विषय के (कक्षा छठी से लेकर बारहवीं तक अध्यापन हेतु) अध्यापकों की आवश्यकता है। उचित मानदेय के साथ भोजन, दूध, वस्त्र आदि की सुविधा है। सम्पर्क-८८००४४३८२६

७. **स्थापना दिवस मनाया**- आर्य समाज जागृति विहार-मेरठ का २८वाँ स्थापना दिवस एवं परिवार मिलन समारोह दिनांक २३ जुलाई २०१७ को आर्य समाज मन्दिर, कीर्ति पैलेस (जागृति विहार) मेरठ के प्रांगण में समारोहपूर्वक मनाया गया। यज्ञ के ब्रह्मा पं. रणधीर कुमार शास्त्री रहे।

चुनाव समाचार

८. **महिला आर्यसमाज गोमती नगर, लखनऊ, उ.प्र.** के चुनाव में **प्रधाना**- श्रीमती सुमन पाण्डेय, **मन्त्राणी**- श्रीमती शैलजा आर्य, **कोषाध्यक्ष**- श्रीमती गीता मिश्रा को चुना गया।

९. **आर्यसमाज गोमती नगर, लखनऊ, उ.प्र.** के चुनाव में **प्रधान**- श्री बी.जी. पालीवाल, **मन्त्री**- श्री सौरभ सिन्हा, **कोषाध्यक्ष**- श्री शिवधर मौर्य को चुना गया।

१०. **आर्यसमाज सी-३, पंखा रोड, जनकपुरी** के चुनाव में **प्रधान**- श्री शिवकुमार मदान, **मन्त्री**- श्री रमेशचन्द्र आर्य, **कोषाध्यक्ष**- श्री भूपासिंह सैनी को चुना गया।

शोक समाचार

११. आर्यसमाज के सक्रिय वैदिक प्रवक्ता पं. लक्ष्मण कुमार शास्त्री की माता **श्रीमती मालती देवी** का गत १ जुलाई २०१७ को पोलसरा ओडिसा में शतायु में निधन हो गया। वैदिक विद्वानों की उपस्थिति में वैदिक विधि से अन्त्येष्टि संस्कार किया गया।

१२. **श्रद्धाञ्जलि**- आर्य समाज के विद्वान् एवं शिक्षाविद् **डॉ. धर्मपाल आर्य** का दिनांक ९ जुलाई २०१७ को प्रातःकाल ४ बजे हृदयगति रूक जाने के कारण आकस्मिक निधन हो गया। उनका अन्तिम संस्कार ९ जुलाई को सांयकाल ६.३० बजे दिल्ली की पंजाबी बाग श्मशान भूमि में पूर्ण वैदिक रीति के साथ किया गया। डॉ. धर्मपाल आर्य समाज संगठन से काफी समय से जुड़े हुए थे। उन्होंने उच्चकोटि की शिक्षा प्राप्त करके दिल्ली विश्वविद्यालय में अध्यापन का कार्य किया, उसके पश्चात् वह गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार के कुलपति बने तथा अनेकों वर्षों तक दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के उपमन्त्री तथा अनेक सामाजिक संस्थाओं के सम्मानित सदस्य रहे। परोपकारिणी सभा उनके प्रति हार्दिक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करती है।

महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल- ऋषि उद्यान, अजमेर
के ब्रह्मचारियों का पुष्कर भ्रमण

अजमेर जिले में आयोजित इंटर क्लब कराटे चैम्पियनशिप में
आर्यवीरों और आर्यवीरांगनाओं द्वारा स्वर्ण, रजत एवं कांस्य पदक विजेताओं के साथ
परोपकारिणी सभा एवं आर्यवीर दल, जिला-अजमेर के अधिकारीगण

आर जे/ए जे/80/2015-2017 तक प्रेषण : १५ अगस्त, २०१७ आर.एन.आई. ३९५९/५९

वैदिक सिद्धान्तों के साहित्य सम्राट

पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय

जन्मतिथि : ६ सितम्बर १८८१

पुण्यतिथि : २९ अगस्त १९६८

सम्पादक शिरोमणि

पं. इन्द्र 'विद्यावाचस्पति'

जन्मतिथि : ९ नवम्बर १८८९

पुण्यतिथि : २३ अगस्त १९६०

सम्बन्धित विवरण पृष्ठ संख्या-२८ व ३०

प्रेषक:
परोपकारिणी सभा
दयानन्द आश्रम, केसरगंज,
अजमेर (राजस्थान) ३०५००१